चन्दामामा
दिसम्बर १९९०

CASIO
सुर के परदों पर हाथ फिराओ
मस्ती में झूम-झूम जाओ
मनचाहे संगीत का केसियो पर आनंद उठाएं... बस परदों पर हाथ घुमाएं
लय की धुन पर बजाओ मनपसंद गीत ...और देखो, कैसे थिरकते हैं प्यारे तुम्हारे मीत!
तो आओ, केसियो की संगीतमय खूबी का असली आनंद उठाओ... सचमुच इसका जवाब कहीं न पाओ!
SA-20
• 32 मिनी की वाले • 100 पी सी एम पहले ही सेट किए टोन • 19 पी सी एम ऑटो रिद्म • 13 "सुपर अकम्पनीमेंट" बेकिंग पैटर्न • पहले सेट किए गए प्रदर्शन ट्यून • दुहरी स्पीकर सिस्टम
PT-380
• 32 मिनी की वाले • 100 पी सी एम पहले सेट किए गए टोन • 12 पी सी एम ऑटोरिद्म • मिनी माइक्रोफोन के साथ • आर ओ एम पैक कंपेटिबल • मेलोडी गाइड फंक्शन • 5 बिल्ट-इन साउण्ड इफेक्ट पैड

डायमंड कॉमिक्स
पेश करते हैं
"कार्टून शीर्षक प्रतियोगिता"
नीचे बने कार्टून के लिए शीर्षक लिखिए
और जीतिए 100/- रुपये का प्रथम पुरस्कार और
फैण्टम डाइजेस्ट नं. 8 के 10 मुफ्त पुरस्कार
शीर्षक के लिए जगह
नाम
पता
पिन कोड
अधिक से अधिक 10 शब्दों में
शीर्षक लिखें और इनाम भी जीतिए।
अपना प्रवेश पत्र 30.11.90 तक भेजें।
सम्पादक का निर्णय अन्तिम व
मान्य होगा।
परिणाम के लिए जनवरी, '91 का अंक देखें
नये डायमंड कामिक्स
कुम्भकर्ण की नींद
चित्रहार
महाबली शाका
तिलस्मी तावीज
डायमंड कामिक्स डाइजेस्ट
फैण्टम 8
डायमंड कामिक्स प्रा. लि.
2715, दरियागंज, नई दिल्ली- 110002

क्लिअरेसिल से रोज़ होमवर्क करते रहें तो दोस्तों के ग्रुप में भी फर्स्ट क्लास नम्बर पाना बिल्कुल आसान.

क्योंकि क्लिअरेसिल त्वचा यानी ज़्यादा साफ़ त्वचा.

कॉलेज में पॉप्युलर होना हो तो पीछे रहकर नहीं चलता और चार लोगों में अलग दिखने के लिए चाहिये ज़्यादा साफ़ त्वचा यानी क्लिअरेसिल त्वचा.

क्लिअरेसिल तीन तरह से मुंहासों पर अपना असर दिखाती है:

एक–यह मुंहासों के अन्दर तक जाती है. दो–ज़्यादा चिकनाई हटाती है. और तीन–मुंहासों को सुखाकर

मिटा देती है.

बात साफ़ है, दुनियाभर में मुंहासों का नं. १ इलाज

है—क्लिअरेसिल.

क्लिअरेसिल लगाइए और दोस्तों का बड़ा ग्रुप बनाइए.

दुनियाभर में मुंहासों का नं.1 इलाज.

"दादाजी, आपका चश्मा ढूंढ़ लिया.
लाइए मेरा ट्रीट!"

ये लो!

कैम्पको ट्रीट – ज़ायकेदार कैरमल मिल्क चॉकलेट बार, जिसका स्वाद है ज़्यादा मज़ेदार.

कैम्पको ट्रीट! खुशियां मनाने का सबसे बढ़िया तरीका. कैरमल और चॉकलेट का ऐसा सरस मिलन कि खाए बिना रहा न जाए! कैरमल की मधुरता और मिल्क चॉकलेट की पौष्टिकता. दोस्तों को खिलाओ, खुद भी खाओ. स्वादिष्ट ट्रीट...कैम्पको ट्रीट.

कैम्पको ट्रीट: हर अवसर को मधुर बनाए.

भारत के सबसे बड़े, सबसे आधुनिक प्लांट में निर्मित. कैम्पको लिमिटेड, मैंगलोर

R K SWAMY/CL/8348/HIN

Campco chocolates / Milk / White / Treat / TURBO / Eclairs / megabite / Playtime / PUFFS / TOFFEE / Assorted Gift Box / Campco beverages / WINNER / COCOA

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

हमें झूठे दंभ का परिणाम भुगतना होगा

वनोंऔर पर्वतों की बरबादी से धरती पर जो खतरा पैदा हो गया है, उसके बारे में हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं । वनों की बरबादी से अनेक प्रकार के जीव-जंतु भी गायब होते जा रहे हैं । प्रकृति के लुटेरे हाथी दांत के लालच में चोरी-छिपे हाथियों को खत्म किये जा रहे हैं, कोमल, रोयेंदार खाल की खातिर समुद्री सीलों को भी खत्म किये दे रहे हैं । यह इसलिए क्योंकि इनका इस्तेमाल एक प्रकार से वैभव का प्रतीक बन गया है । इससे व्यक्ति के दंभ की तुष्टि होती है । पर वास्तव में इससे दंभ की तुष्टि भी उतनी नहीं होती जितनी इससे दूसरों में ईर्ष्या पैदा होती है । और दूसरों में ईर्ष्या पैदा होने कर अर्थ है खुद के लिए असंतोष, गहरा असंतोष ।

अपने झूठे दंभ की तुष्टि के लिए हमें प्रकृति की सुंदर संतान को खत्म करने का कोई अधिकार नहीं । ऐसा करने से प्रकृति में प्रतिशोध की भावना पैदा होना लाज़िमी है । वह हम से हमारा सुख-चैन छीन लेगी, हमारे असंतोष को गहरा, और गहरा करती जायेगी । दरअसल, यही तो हो रहा है । हमें अब भी चेत जाना चाहिए । नहीं चेतें तो हमें काफी-कुछ से हाथ धोना पड़ेगा ।

वर्ष : ४३ | दिसंबर १९९० | अंक : ४

एक प्रति : ३ रुपये | वार्षिक चन्दा : ३६ रुपये
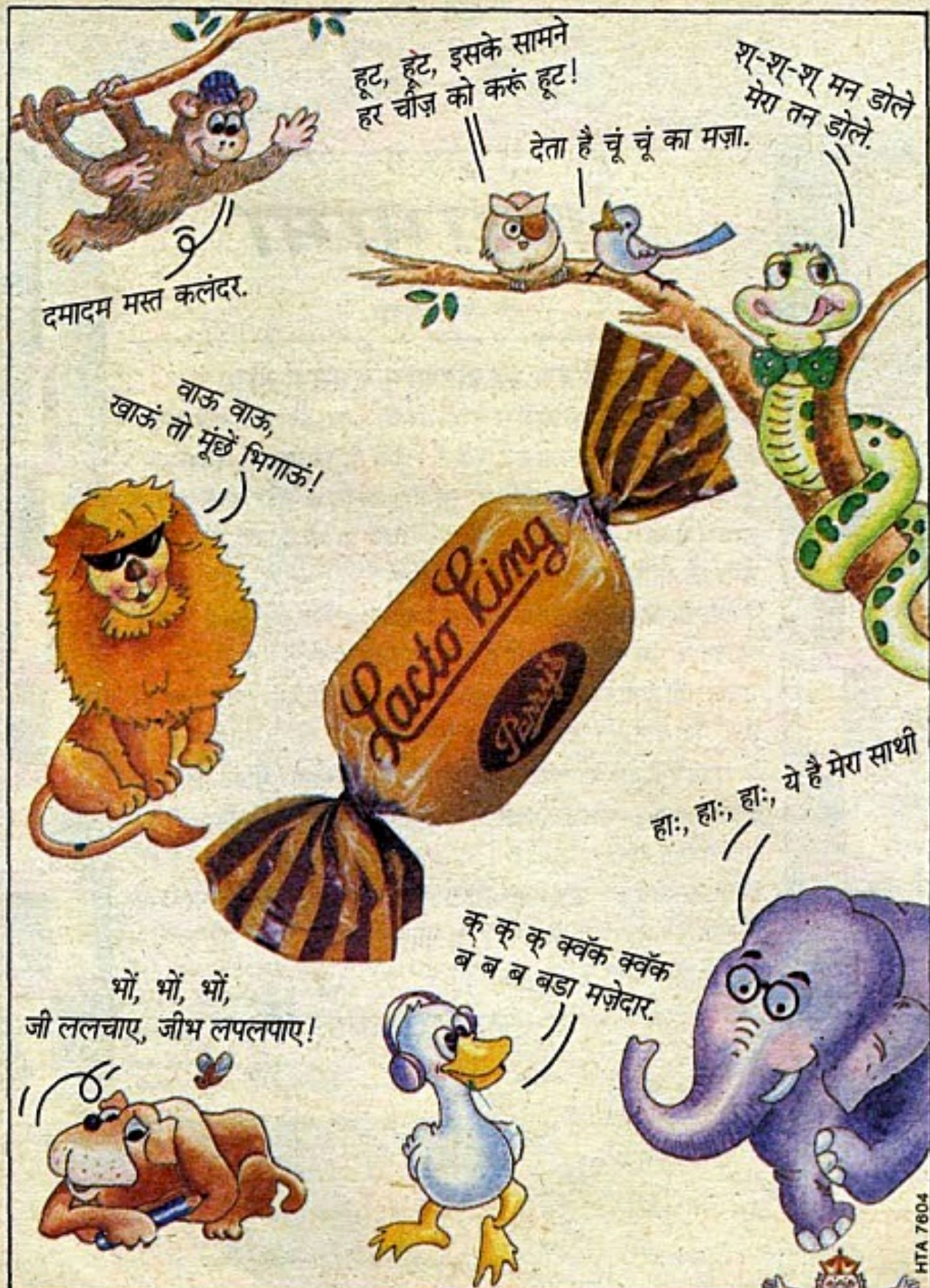
हूट, हूट, इसके सामने
हर चीज़ को करूं हूट!
श-श-श मन डोले
मेरा तन डोले.
देता है चूं चूं का मज़ा.
दमादम मस्त कलंदर.
वाऊ वाऊ,
खाऊं तो मूंछें भिगाऊं!
Lacto King
Parry's
हा:, हा:, हा:, ये है मेरा साथी
क् क् क् क्वॅक क्वॅक
ब ब ब बडा मज़ेदार.
भों, भों, भों,
जी ललचाए, जीभ लपलपाए!
HTA 7604
पॅरीज़ लॅक्टो किंग —
स्वादिष्ट इतने कि हर कोई इस पर लट्टू.
Parry's
THE KING OF SWEETS

एक देश पट्टे पर

हांग-कांग का नाम तो तुमने सुन ही रखा होगा। छोटा-सा टापू-देश है यह, पर बहुत ही सुंदर। भीड़ भी बहुत है यहाँ। ब्रिटेन की यह एक बस्ती है।

अगर तुम एशिया के मानचित्र पर एक नज़र डालो तो पाओगे कि हांग-कांग चीन का एक हिस्सा है। तब यह ब्रिटेन का उपनिवेश या बस्ती कैसे बन गया?

कई वर्षों तक अंगरेज़ लोग चीन में अफीम भेजते रहे और जमकर नफा कमाते रहे। पर १८४१ में चीन की सरकार ने देश में अफीम के आने पर पाबंदी लगा दी। अंगरेज़ इससे नाराज़ हो गये। उन्होंने हांग-कांग टापू को अपने कब्ज़े में ले लिया।
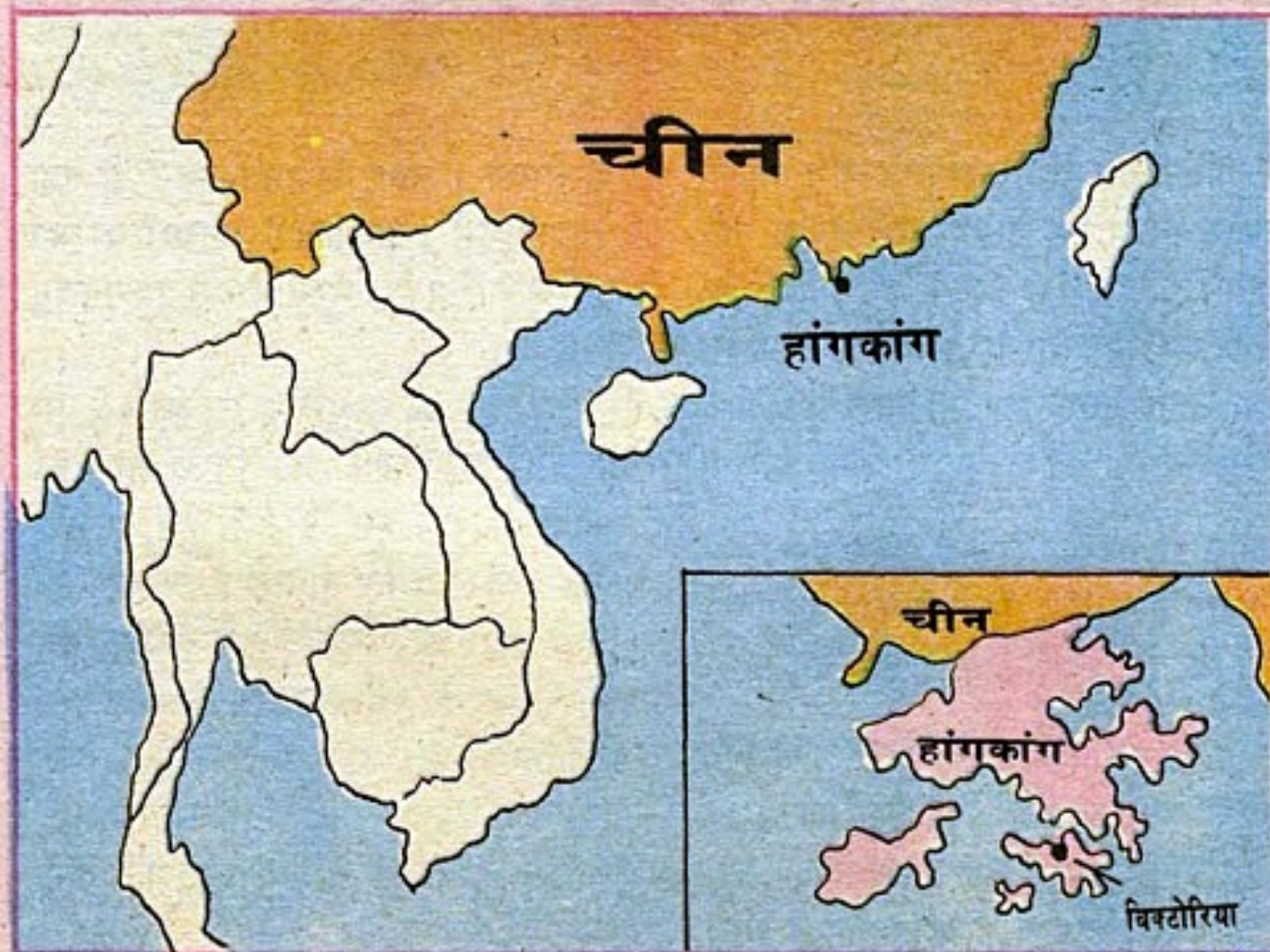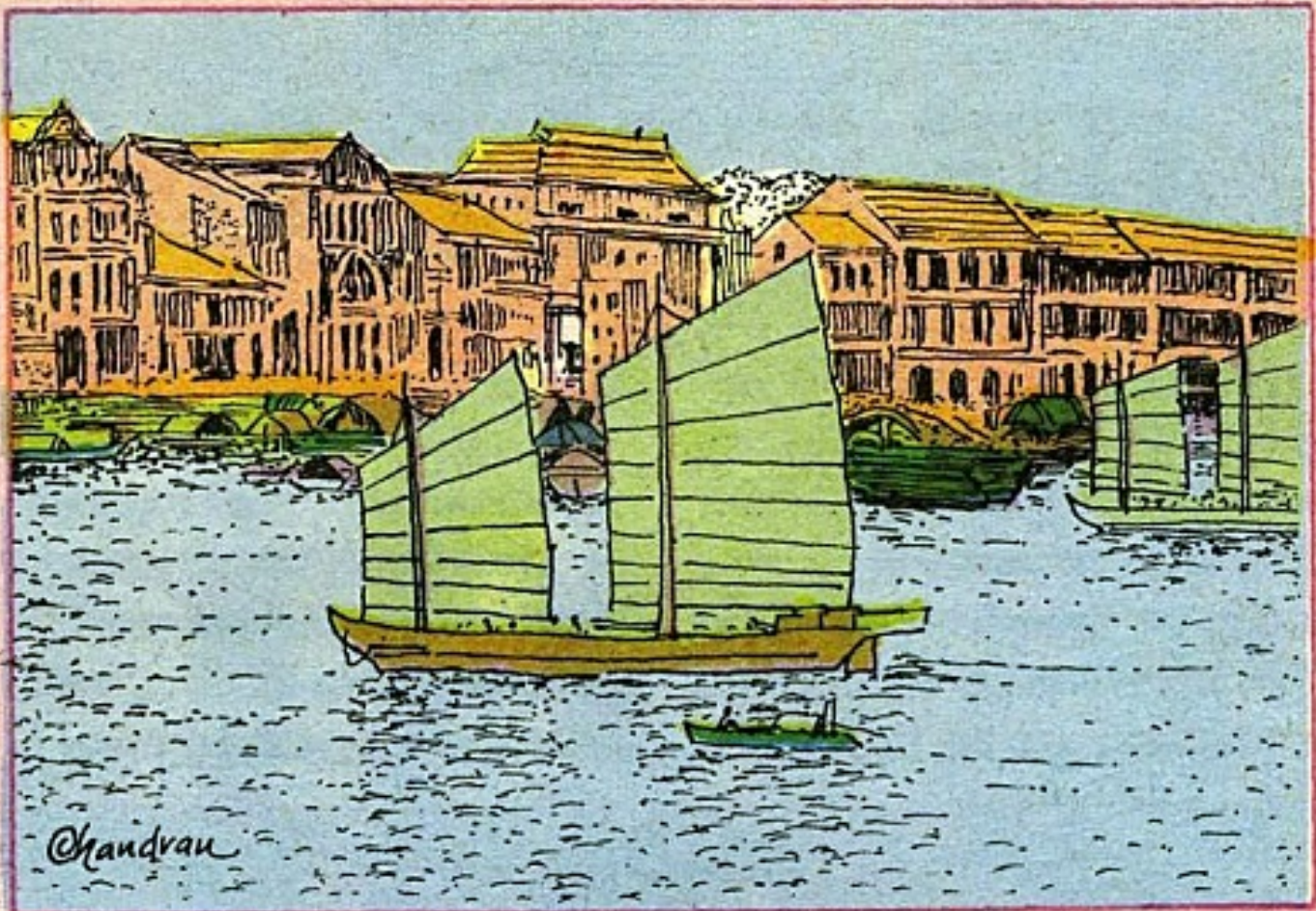
लेकिन मन ही मन अंगरेज़ लोग यह भी समझ रहे थे कि उन्होंने यह अच्छा नहीं किया । फिर कुछ झड़पें और नोकझोंक होती रही, और आखिर अंगरेज़ मान गये कि हांग-कांग उनके पास सौ साल तक चीन द्वारा दिये गये पट्टे के रूप में रहेगा ।

इस पट्टे की अवधि अब १९९७ में खत्म हो जायेगी । चीन की ऐसी कोई मंशा भी नहीं कि यह अवधि बढ़ायी जायेगा ।

लेकिन इस बीच यह नन्हा टापू संसार के सब से व्यस्त नगरों में गिना जाने लगा है । बेहद व्यापार होता है यहाँ । बड़ी ऊँची-ऊँची अट्टालिकाएँ हैं यहाँ । अट्टालिकाओं का जंगल ही समझो । लोगों का रहन-सहन भी बड़ा ऐश्वर्यपूर्ण है । नयी से नयी जानकारी का यहाँ इस्तेमाल होता है । मुख्य चीन से यह एकदम भिन्न है ।

क्या चीन की कम्यूनिस्ट सरकार इसे ऐसे ही चलने देगी? लेकिन कम्यूनिज़्म और मुक्त व्यापार के बीच कुछ भी सांझा नहीं, हालांकि चीन सरकार कहती तो यही है कि वह यहाँ किसी प्रकार का परिवर्त्तन नहीं करेगी । पर हांग-कांग के बड़े व्यापारी इस कथन में विश्वास नहीं करते। उन्होंने अपना कारोबार पहले से ही सिंगापुर, बैंकाक, ताईपाई अथवा मनीला जैसे शहरों में ले जाना शुरू कर दिया है ।

सावधान! सावधान!

बात बहुत पुरानी है । मधुपुरी नाम के गाँव में रामनाथ नाम का एक व्यक्ति रहता था । वह बड़ा दानी था, और दानी होने के कारण ही वह एक संपन्न व्यक्ति से कंगाल व्यक्ति बन गया था । उस के दानी होने का सब से ज़्यादा लाभ उसके रिश्तेदारों ने ही उठाया था । वह कंगाल हो गया तो वे उससे कन्नी काटने लगे, बल्कि उसके बारे में उलटा-सीधा प्रचार भी करने लगे । कुछ रिश्तेदारों का कहना था कि क्योंकि रामनाथ में महादानी कहलाने की आकांक्षा थी इसीलिए वह आगे-पीछे सोचे बिना अंधाधुंध दान में सब कुछ उड़ाये जा रहा था । कुछ का कहना था कि रामनाथ की कमाई महेनत की कमाई नहीं थी, इसीलिए वह उसे लुटाता था । कुछ इससे भी आगे बढ़ गये । उनका कहना था कि रामनाथ के पैसे में कुछ ऐसा था कि उससे पैसा लेने वाला व्यक्ति बरबाद ही हो जाता था । उन्होंने यह भी प्रचार किया कि जो भी रामनाथ की सहायता करेगा, उसकी बरबादी निश्चित है । इसलिए बाहर का कोई व्यक्ति अगर उसकी मदद करना चाहता भी, तो वह पीछे हट जाता ।

रामनाथ बहुत परेशान हो उठा और उस परेशानी में उसने अपना गाँव ही छोड़ दिया । उसके बाल-बच्चे भी उसके साथ थे । चलते-चलते वे काफी दूर निकल आये थे । वे सब थक चुक थे । इसलिए वे एक पेड़ के नीचे विश्राम करने के लिए बैठ गये । बच्चों को तो वहाँ बैठते ही नींद आ गयी ।

"सुनिए!" दुःख से भरी रामनाथ की पत्नी एकाएक बोली, "हमने तो कभी अपने किसी रिश्तेदार का अपकार नहीं किया था!

शिप्रा बनर्जी

तब वे हम से इस क़दर ख़फ़ा क्यों हैं?"

"पगली, हूं" रामनाथ ने हंसकर उत्तर दिया, तुम बिलकुल नासमझ हो! इस विपत्तिकाल में हमारे रिश्तेदारों का फ़र्ज़ बनता है कि वे हमारी मदद करें। पर वे यह मदद करने से बचना चाहते हैं, और इसीलिए हमारे खिलाफ ऊल-जलूल प्रचार करते हैं। यह सब ढोंग है उनका। ऐसे ढोंगियों के बारे में सोचना भी वक्त गँवाना है। चलो तुम थोड़ा आराम कर लो!"

रामनाथ की पत्नी ने गहरी सांस ली और फिर नींद में डूबने लगी। रामनाथ भी आराम करने के लिए लेट गया और नींद में धीरे-धीरे उतरने लगा। जब वह पूरी नींद में था तो उसने एक सपना देखा। सपने में एक साधु उससे कुछ कह रहा था। वह उसकी बात पूरे ध्यान से सुनने लगा—

"निस्संदेह, तुम एक दरियादिल व्यक्ति हो। पर तुमने अंधा-धुंध पैसा लुटाकर अच्छा नहीं किया। तुमने योग्य-अयोग्य, हर किसी की सहायता की और स्वयं कंगाल हो गये। खैर तुम्हारी यह दानवीरता बेकार नहीं जायेगी। इस पेड़ के खोखल में एक तांबे की अंगूठी पड़ी है। तुम वह अंगूठी पहन लो। तुम जितना धन चाहोगे, पाओगे। पर अंगूठी पहनकर पहले तुम्हें पास के कमलापुर गाँव में जाना होगा। वहाँ तुम्हें चौपाल पर दस व्यक्ति दिखाई देंगे। उन में तुम्हारा एक रिश्तेदार भी होगा। बिना किसी से पूछे तुम उस रिश्तेदार को पहचानोगे। और यदि तुम उसे पहचान जाओगे तो तुम्हारी यह तांबे की अंगूठी सोने की बन जायेगी। उसी वक्त से तुम जितना धन चाहोगे, पाते जाओगे। हाँ, एक बात का ध्यान रहे—तुम अब किसी अपात्र को दान नहीं दोगे। यदि दोगे तो यह अंगूठी अपना काम करना बंद कर देगी। और फिर तांबे की हो जायेगी।...अपने उस रिश्तेदार के यहाँ तुम केवल एक रात ही रुकोगे, और वहाँ से अपने गाँव लौट जाओगे। चलो, अब जल्दी करो।"

रामनाथ चौंककर उठा और उस पेड़ के खोखल में तांबे की अंगूठी ढूंढ़ने लगा। अंगूठी, वाकई, वहाँ थी। रामनाथ ने वह अंगूठी उठायी और उसे अपने बायें हाथ की तर्जनी में पहन लिया। वह तर्जनी पर बिलकुल ठीक बैठी।

अंगूठी पहनकर रामनाथ ने अपनी पत्नी और बच्चों को जगाया और उनके साथ कमलापुर गाँव की तरफ चल पड़ा। अभी अंधेरा नहीं हुआ था, गाँव की चौपाल पर वाकई दस व्यक्ति बैठे थे, और वे रामनाथ के बारे में ही बातचीत कर रहे थे। उनमें से एक बोला:

"मेरे पिताजी एक बार किसी काम से मधुपुरी गाँव गये। वहाँ उन्हें दिल का दौरा पड़ गया। वह दर्द से तड़पने लगे। पर वहाँ अपनी जान-पहचान का हर व्यक्ति बेगाना बन गया। फिर अनजान व्यक्ति ने उन्हें तड़पते देखा और वैद्य जी के पास पहुंचाया। इसके अलावर वैद्य जी ने जो भी रकम मांगी, उसने दे दी। उसने वह रकम कभी वापस भी नहीं मांगी। हमें यह सब अपने पिताजी से ही पता चला। उस व्यक्ति का नाम रामनाथ था। ग़ज़ब का आदमी था वह! सुना है अब वह स्वयं बड़ी तंगी में है और अपना गाँव छोड़कर चला गया है।"

इस तरह एक के बाद एक व्यक्ति ने रामनाथ का गुणगान किया। पर वहाँ एक व्यक्ति ऐसा भी था जिससे रामनाथ की प्रशंसा बर्दाश्त नहीं हुई। वह कहने लगा, "तुम लोग असली बात नहीं जानते। रामनाथ के दादा ने ग़रीबों पर अनेक अत्याचार किये थे और यह धन कमाया था। जब उसके पाप बहुत बढ़ गये तो उसे ज़हरबाद ने आ दबोचा और उसकी जान लेकर ही रुखसत हुआ। इतना ही नहीं, रामनाथ का बाप भी उसी ज़हरीले फोड़े का शिकार हुआ। रामनाथ अब बहुत परेशान था। उसने किसी साधु से सलाह ली और उसने बताया कि उसे अपनी सारी संपत्ति दान में दे डालनी चाहिए। बस, रामनाथ ने

अपनी सारी संपत्ति दान-धर्म में लुटा दी। अपने गाढ़े पसीने की कमाई थी नहीं उसके पास, वरना उसकी यह संपत्ति इस तरह ग़ायब न होती। रामनाथ का बाप भी ज़हरबाद से मरा। अब बारी रामनाथ की थी। वह कंगाल हो गया!"

"ओह, तो यह बात है! महेश हमें नहीं बताता तो हमें असलियत का कैसे पता चलता! हमें तो उसे महादानी समझे बैठे थे!" उनमें से एक व्यक्ति बोला।

रामनाथ फौरन समझ गया कि महेश नाम का यह व्यक्ति ही उसका रिश्तेदार है। वह झट से आगे बढ़ा और उसे अपना परिचय देते हुए बोला, "बेटा, मैं ही रामनाथ हूँ। मधुपुरी से हम चले आ रहे हैं। मैं ने सोचा, चलो आज रात तुम्हारे यहाँ ही बितायी जाय। अपने सगे-संबंधियों को छोड़कर कोई और कहाँ जायेगा!"

रामनाथ ने जैसे ही अपना परिचय दिया, वैसे ही वहाँ बैठे सभी लोग उठकर खड़े हो गये और उन्होंने उसका अभिवादन किया। फिर बोले, "महोदय, हमने आपके बारे में बहुत कुछ सुन रखा है। हमारा सौभाग्य है कि आपके दर्शन हो गये। हमें यह जानकर बहुत दुख है कि आप इस तरह विपत्ति में पड़ गये हैं! कृपा करके हमें हमारे योग्य सेवा बतायें।"

रामनाथ ने अपने बायें हाथ की तर्जनी पर पहनी अंगूठी की तरफ अब ग़ौर किया। वह सोने की हो चुकी थी। रामनाथ ने उनकी तरफ थोड़ा मुस्कराते हुए कहा, "मुझे किसी की मदद की ज़रूरत नहीं। बल्कि आप में से अगर किसी को मदद की ज़रूरत हो तो, मुझे बतायें। मैं अब भी आपकी मदद करने की स्थिति में हूँ। तकलीफ तो आती-जाती रहती हैं।"

इस पर उन में से एक ने कहा, "मैं ने साहूकार से एक सौ अशर्फियाँ उधार ली थीं। ब्याज के साथ वह रकम अब पांच सौ

अशर्फियां बन गयी है । यदि इसका भुगतान मैं कल तक नहीं करता तो साहूकार मेरे खेत अपने कब्जे में ले लेगा!"

"तुम रात को साहूकार को अपने साथ लेकर आओ । मैं महेश के यहाँ रुकूंगा । मैं उसकी रक़म निपटा दूँगा ।"

महेश को लगा कि रामनाथ फिर संपन्न हो गया है । वह एकदम विनम्र हो गया और झुककर उसका अभिवादन करते हुए बोला, "पिताजी कह रहे थे कि आप रिश्ते में मेरे ताऊ हैं । वह आपको याद भी कर रहे थे । चलिए, घर चलते हैं ।"

उस रात रामनाथ और उसका परिवार महेश के घर पर ही रुके । उनका खूब सत्कार किया गया । रामनाथ की पत्नी और उसके बच्चे हैरान थे । रामनाथ ने अपनी पत्नी को अंगूठी के बारे में बता दिया । और ज़रूरतमंदों की दिल खोलकर मदद की ।

अगले दिन रामनाथ अपने गाँव को लौटने को तैयार हुआ । महेश के पिता ने सोचा यह मौका हाथ से क्यों जाने दें । बोला, "भैया, बेटी की शादी के लिए दो हज़ार अशर्फियाँ कम पड़ रही हैं । तुम्हारी मदद से हमारी यह कमी पूरी हो जायेगी । वरना बेटी की शादी रुक सकती है!"

"यह तो मामूली बात है । चलिए, पटेल के पास चलते हैं । वहाँ ऋण-पत्र लिखवा लेंगे ।" रामनाथ ने फौरन उत्तर दिया ।
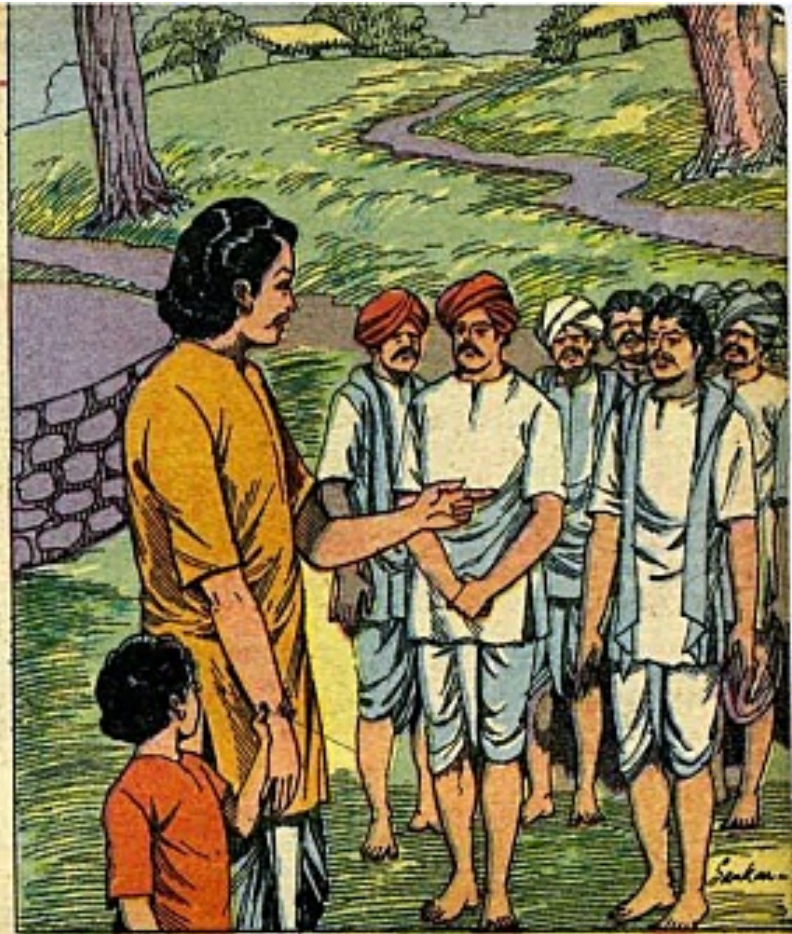
"ऋण-पत्र कहाँ?" महेश का पिता हैरत में पड़ गया । "यानी, तुम कर्ज़ दोगे, मदद नहीं?"

"हाँ, मैं नहीं चाहता कि मेरे सगे-संबंधी भिखारी बनकर मेरे सामने आयें । यह तो ठीक है न?" रामनाथ ने अपनी बात में बात जोड़ दी ।

"बेशक! पर सगे-संबंधियों में ऋण-पत्र लिखवाने की क्या ज़रूरत है? क्या किसी को दी हुई ज़बान काफी नहीं है?" महेश का पिता अपनी चाल चलने की कोशिश में था ।

"तब किसी को बिना ऋण-पत्र

लिखवाये ऋण देकर देखो । मेरी बात तुम्हारी समझ में आ जायेगी ।" रामनाथ ने अपना मुद्दा स्पष्ट करते हुए कहा ।

महेश का पिता अब चुप था । उसे बिना कर्ज के रह जाना पड़ा ।

रामनाथ अब सपरिवार अपने गाँव को लौट पड़ा । रास्ते में उसी पेड़ के नीचे वह आराम करने के लिए रुका । जल्दी ही उसके बच्चे सो गये । बच्चों को सोया देख रामनाथ की पत्नी ने अपने पति से पूछा, "आपने सब की मदद की, पर अपने भाई की नहीं की । यह क्यों?"

"अब तक तुम नादान ही हो!" रामनाथ ने पत्नी को मीठी झिड़की दी, " उसने मुझ से पैसा इसलिए नहीं मांगा था कि उसे ज़रूरत थी । इसीलिए मांगा था क्योंकि उसे लगा मेरे पास पैसा है! ज़रूरतमंद होता तो ऋण-पत्र लिखने में वह यूँ ज़रा भी न हिचकिचाता । ज़रूरतमंद और ढोंगी के बीच हालांकि भेद करना मुश्किल है, पर मदद ज़रूरतमंद की ही करनी चाहिए । समझी मेरी बात?"

इस उत्तर से रामनाथ की पत्नी आश्वस्त हो गयी । उसे अब नींद भी आने लगी थी । रामनाथ को भी नींद आने लगी । जब वह गहरी नींद में था तो उसे सपने में फिर वही साधु दिखाई दिया, "शाबाश!" उसने कहा, "अब तुम समझदार हो गये हो । अब तुम्हें नकली और असली में भेद पता चल गया है! तुम ने जिस असानी से अपने रिश्तेदार को पहचाना, उससे मुझे खुशी हुई । अब तुम अपने गाँव को लौट जाओ । ग़रीबी अब कभी तुम्हारे पास नहीं फटकेगी!" और इतना कहकर वह साधु अदृश्य हो गया ।

रामनाथ की नींद खुली तो उसने अपनी पत्नी और बच्चों को भी जगाया । फिर वे मधुपुरी की ओर चल दिये और जल्दी ही वहाँ पहुँच गये ।

मधुपुरी में रामनाथ ने वही धर्म-कर्म शुरू कर दिया । पर अब वह अंधा-धुंध पात्र-कुपात्र को दान नहीं देता था । अब पात्र ही उससे दान पाते थे ।

१५

(जयपुरी के सरदार शंकर वर्मा ने खंडहरों में से मिली कनकदुर्गा की सोने की मूर्ति वीरसिंह के हवाले करने से इनकार कर दिया था । इस पर वीरसिंह का सेनापति सर्पदंत सेना की एक टुकड़ी के साथ जयपुरी के किले में जा घुसा और सोने की उस मूर्ति को हथियाकर उसने उसे अपने भरोसे के सैनिकों के सुपुर्द कर दिया । सैनिक उसे कसके थामे, नदी के रास्ते नाव से ले जा रहे थे कि एकाएक चारों तरफ काफी तेज़ चौंध पैदा हुई और पलक झपकते ही कोई नाव में बैठे सैनिकों से मूर्ति छीनकर ग़ायब हो गया । अब आगे पढ़िए ।)

"रुक जाओ" सर्पदंत ने नाव में बैठे अपने सैनिकों को चिल्लाकर हुक्म दिया, और फिर उनसे उस घटना के बारे में जानना चाहा । "कहाँ गया वह डाकू? डाकू घड़ियाल तो नहीं हो सकता जो तैरकर तुम्हारा पीछा करेगा! तुम लोग ज़रूर सोये पड़े होगे! या किसी सपने में खोये हुए होगे!"

"हुज़ूर, वह मूर्ति लेकर उड़ गया!" सैनिक घबराहट में बेहाल हुए जा रहे थे ।

सर्पदंत अब तक स्थिति समझ चुका था । वह यह भी समझ गया था कि मूर्ति पूरी तरह ग़ायब हो चुकी है ।

लेकिन ताज्जुब! कैसे कोई व्यक्ति एक

हाथ से रस्से से झूलता हुआ नदी के एक तट से आया और दूसरे हाथ से मूर्ति उठाकर नदी के दूसरे तट पर जा पहुँचा! फिर मूर्ति कोई हल्की तो नहीं थी! ठोस सोने की थी और भारी भी काफी थी, यहाँ तक कि शंकर वर्मा के महल से उसे चार सैनिक उठाकर नाव तक लाये थे!

नाव अब किनारे से आ लगी थी और मूर्ति की रक्षा करने वाले सैनिक सर्पदंत के सामने अपने सिर झुकाये निरीह-से खड़े थे । सर्पदंत को और कुछ नहीं सूझा तो उसने अपनी परेशानी में उन दो सैनिकों से एक के मुंह पर ज़ोर से थप्पड़ दे मारा और फिर चिल्लाया, "यह हुआ कैसे? कैसे वह डाकू तुम लोगों से मूर्ति छीन सका?"

जिस सैनिक के थप्पड़ पड़ा था, वह पहले ही पसीना-पसीना हो रहा था । दरअसल, डाकू ने मूर्ति छीनने से पहले उसे लतिया भी दिया था । कहने को तो वह कह सकता था कि इतने ढेर-सारे सैनिकों के तट पर नाव के साथ-चलने के बावजूद जब वह डाकू सब को चकमा दे सकता था, तब अगर वह मूर्ति लेकर ग़ायब हो गया तो इसमें हैरानी की कौन-सी बात है! पर सर्पदंत के सामने अपना मुंह खोलने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ी । हाँ, उसने थोड़ी होशियारी ज़रूर बरती और डरते-डरते बोला, "हुज़ूर, आप विश्वास कर सकते हैं कि कोई एक ही हाथ से इतनी भारी मूर्ति उठाकर उड़नछू हो जायेगा?"

"तब कहना क्या चाहते हो?" सर्पदंत ने कड़ककर सवाल किया ।

"हुज़ूर, मुझे पक्का यकीन है कि ज़रूर यह कोई भूत-प्रेत रहा होगा!" सैनिक ने उत्तर दिया ।

लगा जैसे कि सर्पदंत के भेजे में बात पड़ गयी है । "हूँ!" वह संभालकर बोला, "राजा के सामने ऐसे ही बोलना!"

और वाकई जब वे सब राजा वीरसिंह के सामने पेश हुए तो उन्होंने कई तरह के

ऐसे किस्से-कहानियाँ गढ़ डाले । ''माई-बाप, एकदम घुप्प अंधेरा हो गया था । आकाश से एक बड़े भयानक जीव ने सीधे नाव पर झपट्टा मारा और फिर मूर्ति को उठाकर एकदम ग़ायब हो गया । उसका कहीं नामोनिशान तक नहीं था । आदमी का तो यह काम हो नहीं सकता! कोई प्रेतात्मा ही ऐसा कर सकती है!''

वीरसिंह असमंजस में था । वह समझ नहीं पा रहा था कि सर्पदंत की बात पर विश्वास करे या नहीं । लेकिन हकीकत तो यह थी कि उसे एक बार फिर हार मिली थी । कहीं कोई उसके खिलाफ काला इल्म तो इस्तेमाल नहीं कर रहा? अगर ऐसी बात है तो इसे कैसे बेअसर किया जाये? क्या उसे किसी ओझा-तांत्रिक की मदद लेनी चाहिए? पर ऐसा ओझा-तांत्रिक मिलेगा कहाँ?

उधर जयपुरी पर उदासी के बादल छाये हुए थे । लोग तो वहाँ यह आस लगाये बैठे थे कि वे नये मंदिर में मूर्ति की प्रतिष्ठा करेंगे । सर्पदंत की उद्दंडता ने उन्हें झकझोर दिया था । वे यह तो जानते थे कि सुमेध में एक निरंकुश राजा का राज है, लेकिन उन्हें यह उम्मीद नहीं थी कि उसकी निरंकुशता ऐसा जघन्य रूप लेगी!

सरदार शंकर वर्मा अपने कक्ष में
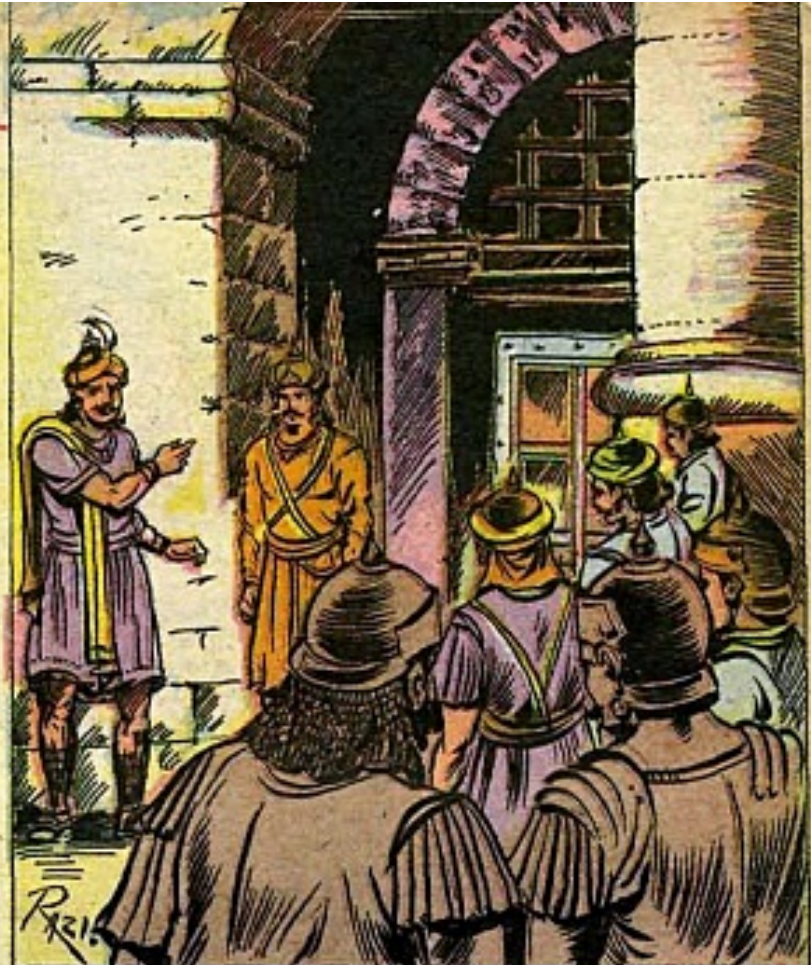
गुम-सुम बैठा था । निकट किसी के जाने की हिम्मत नहीं हो पा रही थी । स्थिति की गंभीरता को समझते हुए उसकी बेटी सुकन्या धीरे से उसके पास पहुँची और बोली, ''पिताजी, मेरा मन कहता है कि देवी कनकदुर्गा ज़रूर हमारे पास वापस आ जायेगी!''

शंकर वर्मा के चेहरे पर हल्की-सी, उदासी-भरी मुस्कराहट दौड़ गयी । वह अपनी बेटी से बहुत प्यार करता था । बेटी थी भी सुंदर और इकलौती । वह जानता था कि सुकन्या उस मुर्ति को किस कदर चाहती है । जो उत्सव मनाया जाना था, सुकन्या ही उसके पीछे प्रेरणा रही

थी । सब से गहरा सदमा उसी को पहुँचा होगा । फिर भी वह अपने पिता को सांत्वना दे रही थी!

शंकर वर्मा कुछ नहीं बोला । उसने उमड़ते आंसुओं को दबा लिया और अपनी बेटी को अपने अंक में लेकर उस पर अपना भरपूर स्नेह उंडेलने लगा ।

''श्रीमान्''!

अजीब आवाज़ में पुकारे जाने पर शंकर वर्मा चौंका । उसने आंख उठाकर ऊपर की तरफ देखा । वहाँ, खंभे पर, ऋषि जयानंद के आश्राम का पालतू तोता मल्ली बैठा था ।

शंकर वर्मा उठकर खड़ा हो गया । पक्षी फुदककर नीचे उतरा और फिर थोड़ा-सा उड़कर एक फानूस पर बैठकर पीछे की ओर देखने लगा । इसका मतलब क्या हुआ—कि सरदार उसके पीछे-पीछे हो ले?

शंकर वर्मा ने वैसा ही किया । उसकी बेटी भी उसके साथ-साथ हो ली । पक्षी उड़कर बाहर उद्यान में आया । वहाँ चांदनी छिटकी हुई थी । शंकर वर्मा और सुकन्या भी उद्यान में आ गये । पक्षी अब फुदककर अनार के पेड़ की एक शाखा पर जा बैठा । जैसे शंकर वर्मा पक्षी पर आंख गुढ़ाये पेड़ के निकट हुआ, वैसे ही उसकी बेटी खुशी से उछल पड़ी, ''पिताजी, पिताजी, वहाँ देखिए! मूर्ति वापस आ गयी है!''

और वाकई मूर्ति पेड़ के नीचे थी । सुकन्या तुरंत वहीं बैठ गयी और उसने मूर्ति को अपने आलिंगन में ले लिया । उसकी आँखों से अश्रु-धारा बह रही थी । ''पिताजी, मैं कहती नहीं थी कि मूर्ति हमारे पास वापस आयेगी!'' उसे उत्साह में कुछ सूझ नहीं रहा था ।

शंकर वर्मा के पास कोई शब्द न थे । वह बिलकुल स्तब्ध हो रहा था । वाकई, देवी तो लौट आयी थी! लेकिन यह हुआ कैसे? कौन बतायेगा उसे यह राज़? उसने मल्ली के लिए इधर-उधर नज़र

दौड़ायी । शायद वही उसे कुछ बता दे!

मल्ली ने बड़ी प्यारी आवाज़ निकाली । शंकर वर्मा ने उसकी तरफ देखा और देखकर हैरान रह गया । वह एक युवक के कंधे पर आराम से बैठा था और युवक पेड़ की दूसरी तरफ से निकलकर आ रहा था ।

युवक ने झुककर शंकर वर्मा का अभिवादन किया और फिर मुस्कराते हुए बोला, "श्रीमान्, आप मुझे नहीं जानते, पर मैं आपको जानता हूँ । मेरे गुरु मुनि जयानंद आपके बारे में बात करते नहीं अघाते ।"

"क्या तुम... नहीं, नहीं.. राजकुमार संदीप तो नहीं हो?" शंकर वर्मा बड़े स्नेह से फुसफुसाया ।

"मैं ही संदीप हूँ, आपका सेवक ।" राजकुमार ने उत्तर दिया, और अगले ही क्षण वह शंकर वर्मा के बाहु-पाश में था । सुकन्या हैरत-भरी आंखों से यह सब देख रही थी ।

"कब से मेरी इच्छा थी तुम्हें देखने की, बेटी! मैं ईश्वर का कितना कृतज्ञ हूँ कि उसने आखिर मेरी यह इच्छा पूरी की । लेकिन यह मूर्ति वापस आयी कैसे?"

"यह सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ, इसे लाने का!" संदीप ने विनम्रता से कहा ।

"लेकिन कैसे?" शंकर वर्मा को

कौतूहल हो रहा था ।

राजकुमार ने उसे सारी बात कह सुनायी कि कैसे वह नदी के एक किनारे से झूलता हुआ उसके दूसरे किनारे पर पहुँचा और कैसे उसने इसी बीच मूर्ति को उठाया और कैसे वह घोड़े को सरपट दौड़ता हुआ जयपुरी पहुँचा ।

"लेकिन, मेरे प्यारे बच्चे, तुमने कैसे इतनी भारी मूर्ति उठायी? वह भी एक हाथ से?" शंकर वर्मा विस्मय में पड़ा हुआ था ।

"श्रीमान्, मैं तो खुद ही इस सफलता पर हैरान हूँ ।" राजकुमार ने उत्तर दिया । अब सोचता हूँ तो लगता है कि यह तो बड़ा दुष्कर कार्य था । दूसरी बार शायद मुझ से हो भी न पाये । शायद कोई अद्‌भुत शक्ति मुझ में प्रवेश कर गयी थी । मैं खुद नहीं समझ पा रहा हूँ कि वह शक्ति आयी कहाँ से!"

"देवी स्वयं उस शक्ति का स्रोत बनी होगी । वह वापस आना चाहती थी और वह आ गयी है ।" सुकन्या ने बड़े मधुर अंदाज़ में कहा ।

सुकन्या के इस अंदाज़ पर जैसे ही राजकुमार की नज़र उठी, शंकर वर्मा ने उन दोनों की ओर गौर से देखा और देखकर मुस्करा दिया । फिर उसने राजकुमार को संबोधित करते हुए कहा, "रामकुमार, यह मेरी बेटी है सुकन्या । इसे अभी बताना पड़ेगा कि तुम्हारे जैसे युवराज के साथ बात कैसे की जाती है ।"

"लेकिन वह सच कहना तो जानती है!" राजकुमार ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया ।

"सुकन्या ।" शंकर वर्मा बोला, "हमें अपने सम्मानित अतिथि का स्वागत करना चाहिए और इसके विश्राम की व्यवस्था करनी चाहिए ।"

"श्रीमान्, मैं आपके साथ महल में चलूंगा । पर वहाँ कुछ ही देर तक

रुकूंगा। मेरे सहयोगी बड़ी बेताबी से मेरा इंतज़ार कर रहे होंगे। हाँ, आपको यह भी बता दूँ कि वीरसिंह एक बार फिर हमला कर सकता है। मेरे मित्र और सहयोगी हर संभव प्रयास करेंगे कि आपकी रक्षा हो, लेकिन आपको भी खबरदार रहना होगा," राजकुमार ने उन्हें चेताया। अब वे तीनों महल की ओर बढ़ रहे थे।

जैसे ही राजकुमार संदीप ने आसन ग्रहण किया और सुकन्या उसके भोजन के लिए कुछ लाने गयी, शंकर वर्मा ने कहा, "युवराज, मुझे अपनी सुरक्षा की उतनी चिंता नहीं है जितनी तुम्हारी सुरक्षा की है। अब मैं साफ-साफ ही क्यों न कह दूँ—जब तक वह ज़ालिम वीरसिंह ज़िंदा है, तुम सुरक्षित नहीं हो। मेरी राय में, वह वक्त अब आ गया है जब उसके इस शासन का अंत हो जाना चाहिए।"

"श्रीमान्, उसे मारने के हमें कई मौके मिले, लेकिन हम उसका वध नहीं करना चाहते थे। हमें उसे युद्ध में हराना होगा। बेशक, उसने मेरे पिताजी के साथ छल-कपट किया, पर मैं नहीं चाहता कि मरते समय उसके मन में भी यह भावना हो कि उसे छल से मारा गया। उसे युद्ध करना चाहिए। और अगर हम हार गये तो हमें अपनी नियति स्वीकार करनी चाहिए," राजकुमार ने उत्तर दिया।

सुकन्या अब तक लौट आयी थी। उसके हाथ में स्वादिष्ट व्यंजनों से भरी थाली थी। राजकुमार की बातें सुनने के लिए वह उसके पीछे खड़ी हो गयी थी। राजकुमार के प्रति वह मुग्ध थी। उसका पिता, यानी शंकर वर्मा, भी राजकुमार के प्रति उतना ही मुग्ध हो रहा था। (क्रमशः)

देवकन्या

कर्मठ विक्रम फिर पेड़ के निकट आया और उसने लाश को पेड़ से उतारकर अपने कंधे पर लाद लिया। फिर वह हमेशा की तरह चुप्पी साधे श्मशान की तरफ बढ़ चला।

उसी समय लाश में रहा बैताल बोला, "राजन्, आपका दृढ़ संकल्प और कष्ट सहने की शक्ति देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा है। हो सकता है आप वचनबद्ध हों और उसी वचन का पालन करने के प्रयास में ये सब कष्ट झेल रहे हों। मेरी भी यह मान्यता है कि मनुष्यों को अपने दिये वचन और देवताओं को अपने दिये वरदान कभी वापस नहीं लेने चाहिए। खैर, अब मैं आपकी थकान भुलाने के लिए एक देवकन्या की कथा सुनाता हूँ। आप इसे सुनिए।" और बैताल वह कहानी सुनाने लगा—

बैताल कथाएँ
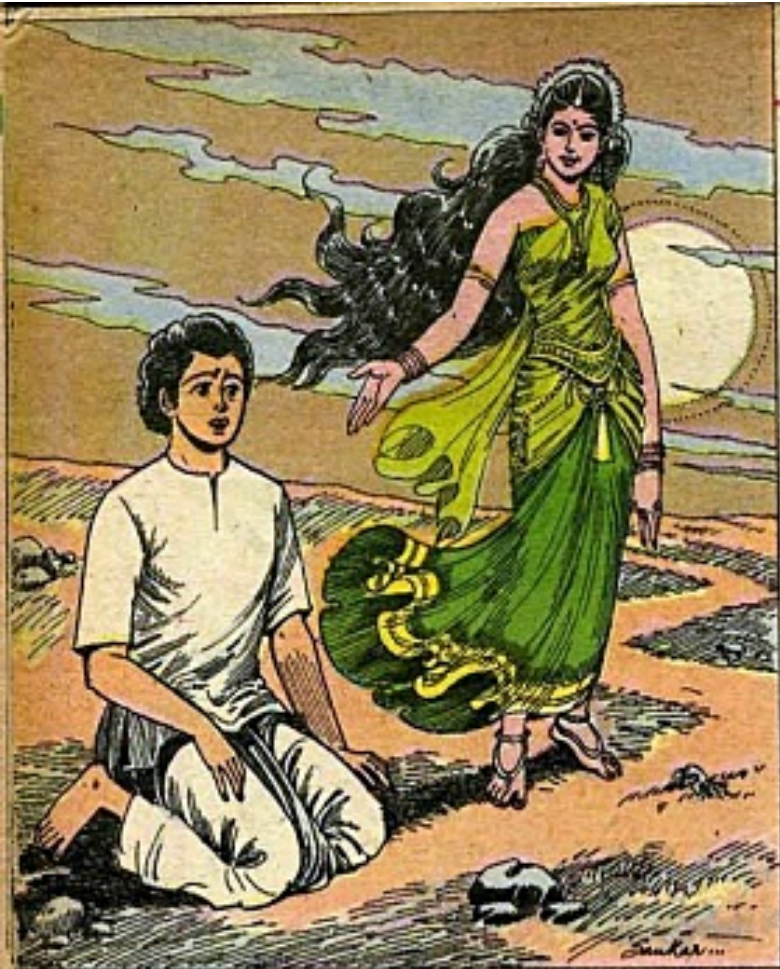
चक्रधरपुर में चंद्रकांत नाम का एक व्यक्ति रहता था। उसने बचपन में ही अपने माता-पिता को खो दिया था। वह अपनी बूढ़ी नानी की देख-रेख में बड़ा हुआ था। पैतृक संपत्ति के रूप में उसे केवल दस एकड़ भूमि मिली थी। पर वह भूमि बंजर थी। इसके अलावा उसके पास और कुछ नहीं था।

एक रात चंद्रकांत अपनी झोंपड़ी में न सोकर उसी बंजर भूमि पर जा लेटा। वहाँ उसके लिए समय बिताना कठिन हो गया। उसे लगा जैसे कि वह किसी बियाबान में पड़ा हो। थोड़ी देर में आकाश में चांद निकल आया और चारों ओर चांदनी फैलने लगी। चंद्रकांत को यह बहुत सुखद लगा और उसे नींद आने लगी।

काफी रात बीत चुकी थी। चंद्रकांत को एकाएक बड़ा सुरीला गीत सुन पड़ा। उसकी आँख खुल गयी। उसने देखा कि एक बड़ी ही सुंदर स्त्री, सुंदर वस्त्रों और सुंदर आभूषणों से सुसज्जित उसकी ओर चली आ रही है। उसे देखते ही चंद्रकांत को लगा कि ज़रूर यह कोई देवकन्या है। उसे संबोधित करते हुए उसने कहा, "तुम बड़ी भग्यशाली हो, पर इस तरह इस खिली चांदनी में गीत गाती और मँडराती, घूम रही हो। लगता है तुम्हें तो इस बात की भी जानकारी नहीं कि कष्ट है किस चिड़िया का नाम! हम मानव तो हमेशा तरह-तरह के कष्टों से घिरे रहते हैं!"

देवकन्या ने चंद्रकांत की तरफ गौर से देखा और बोली, "लगता है अभी तो तुमने बीस भी पार नहीं किये। इस कच्ची उम्र में इतने निराश! आश्चर्य है! आत्मशक्ति में विश्वास रखकर और दृढ़ संकल्प के साथ परिश्रम करने से किसी को कभी निराशा नहीं होती। खैर, छोड़ो! बताओ, तुम पर अब ऐसा कैसा संकट आया हुआ है!"

चंद्रकांत ने देवकन्या को अपने फटे हाल

के बारे में कह सुनाया । और बोला, "अब बताओ, मैं निराश न होऊँ तो क्या करूं?"

देवकन्या मुस्करायी । वह बोली, "तुम्हारी मूर्खता पर मुझे तरस आ रहा है । यह भूमि तुम्हारी अपनी है न! मेहनत करो और इस में फसल उगाओ!"

"यह भूमि बंजर है!" चंद्रकांत ने उत्तर दिया, "इस तथ्य से तुम परिचित भी हो । कितनी भी मेहनत करूं, बीज बोने पर उन में से अंकुर फूटेंगे?"

"हाँ, कहते तो तुम ठीक ही हो!" देवकन्या बोली, "मैं तुम्हें एक वरदान देती हूँ । इस भूमि में तुम अपने हाथों से जो भी बोओगे, वह अंकुरित होगा । बस, तुम मेहनत करो और बीज बो दो । हां, इस वरदान के बदले में तुम मुझे यहाँ घूमने फिरने दोगे । विंध्यवासिनी देवी की पूजा के लिए फूल चुनने दोगे । भूलना नहीं । अब इस खेत के एक कोने में केवल फूल ही फूल उगाओ!"

चंद्रकांत संतुष्ट हुआ और उसने 'हाँ' भर दी । फिर वह भूमि जोतने में लग गया । एक ओर गन्ने की खेती, दूसरी ओर फलों के पौधे और तीसरी ओर फूल की क्यारियाँ लगा दीं । खेत में ही उसने अपने लिए एक झोंपड़ी भी बना ली ।

कुछ ही समय बाद उसकी बंजर भूमि हरियाली से लहलहा उठी । फूलों की क्यारियों में तरह-तरह के फूल खिल उठे ।

एक रात चंद्रकांत जब अपनी झोंपड़ी में सो रहा था, देवकन्या की स्वर-लहरी सुनकर एकाएक जग गया । वह झोंपड़ी से बाहर आया । उसने देखा कि देवकन्या महकते फूलों के बीच खुशी से झूमती फूल चुन रही है । वह उसके निकट गया । देवकन्या ने उसकी बहुत प्रशंसा की और बोली, "देखो, मेहनत करने से आदमी को क्या नहीं मिलता!"

"सब तुम्हारे वरदान का प्रताप है, देवी!" चंद्रकांत ने अपनी कृतज्ञता दिखायी ।

लेकिन ताज्जुब कि चंद्रकांत को अब अपनी झोंपड़ी पसंद न थी। उसकी जगह अब एक पक्का मकान खड़ा होने लगा। मकान खड़ा हो रहा था तो चंद्रकांत को लगा कि यह उतना बड़ा नहीं है, जितना होना चाहिए। इसलिए उसने कुछ फूलों की क्यारियों को खत्म कर दिया। उन्हीं दिनों एक रात जब देवकन्या आयी तो निराश हो गयी। वहाँ फूल नहीं थे। कटे हुए पौधों के कुछ डंठल थे। वह वहाँ बैठ कर आँसू बहाने लगी। चंद्रकांत ने उसे देखा, पर अनदेखा कर दिया, और अपने मकान के भीतर चला गया।

"ऐसा मत कहो। तुम्हारी ज़मीन बंजर थी, इसलिए उसे मेरे वरदान की ज़रूरत पड़ी। अगर वह बंजर न होती तो मेरे वरदान के बिना भी वह हरी-भरी होती। इसलिए परिश्रम ज़रूरी है। श्रद्धा और दृढ़ संकल्प ही प्रमुख हैं!" देवकन्या का उत्तर था।

उस रोज़ से देवकन्या ने नियमित रूप से चंद्रकांत की फुलवाड़ी में आना शुरू कर दिया। वह बहुत खुश थी। शायद इसीलिए पांच साल में भी न खिलने वाली फुलवाड़ी दो साल में ही तैयार हो गयी। गन्ने और धान की फसल भी अच्छी थी। इसलिए चंद्रकांत के पास अपार धन इकट्ठा होने लगा।

उसके पास अब क्योंकि काफी धन जमा हो गया था, इसलिए उसने अपने हाथ से काम करना छोड़ कुछ मज़दूरों को रख लिया। फूलों की क्यारियों की देख-रेख भी अब उसने मालियों पर छोड़ दी। खुद वह अब इधर-उधर बैठकर समय बिताता। कभी-कभी चैपाल पर भी जा बैठता।

एक रात देवकन्या ने उससे कहा, "यहाँ, इन क्यारियों में अब वह एकांत नहीं रहा। मुझे यहाँ घूमने में परेशानी होती है। अच्छा हो, क्यारियों की देख-रेख का काम तुम स्वयं किया करो।"

चंद्रकांत देवकन्या की बात सुनकर

खीझ उठा, "अब मेरे पास उतना वक्त नहीं है । मुझ में वह पहले जैसी तकत भी नहीं है । मैं बाग-बगीचों में हर वक्त बैठे रहना भी नहीं चाहता । हाँ, मैं इस बात का ख्याल रखूँगा कि यहाँ रात को कोई न आये ।"

देवकन्या एक श्ब्द भी न बोली । वह बिलकुल खामोश हो गयी ।

इस घटना के दूसरे दिन चंद्रकांत के गाँव में से कोई राजकर्मचारी गुज़र रहा था । वह कहीं और जा रहा था । चंद्रकांत ने उसे रोक लिया और रात को वहीं ठहराया । रात को उसने उसे बढ़िया दावत दी । राजकर्मचारी ने उसे बताया कि चार वर्षों से महाराजा किसी भयंकर नासूर से पीड़ित है । कई बड़े-बड़े वैद्यों ने उसका इलाज किया है, पर कोई अंतर नहीं पड़ रहा । कुछ समय पहले एक संन्यासी ने राजा के नासूर का परीक्षण किया था । उसका कहना था कि हिमालय के किसी खण्ड में एक फूल पाया जाता है । उसे निचोड़ कर यदि घाव पर लगाया जाये तो घाव ठीक हो जायेगा । उतनी दूर से उस फूल को ताज़ा बनाये रखकर लाना संभव नहीं था । वह रास्ते में ही सूख जाता । इसलिए फैसला हुआ कि उसका बीज लाया जाये और उसे यहीं कहीं बोया जाये । वह बीज संन्यासी ने स्वयं ही हिमालय से भिजावाया था ।
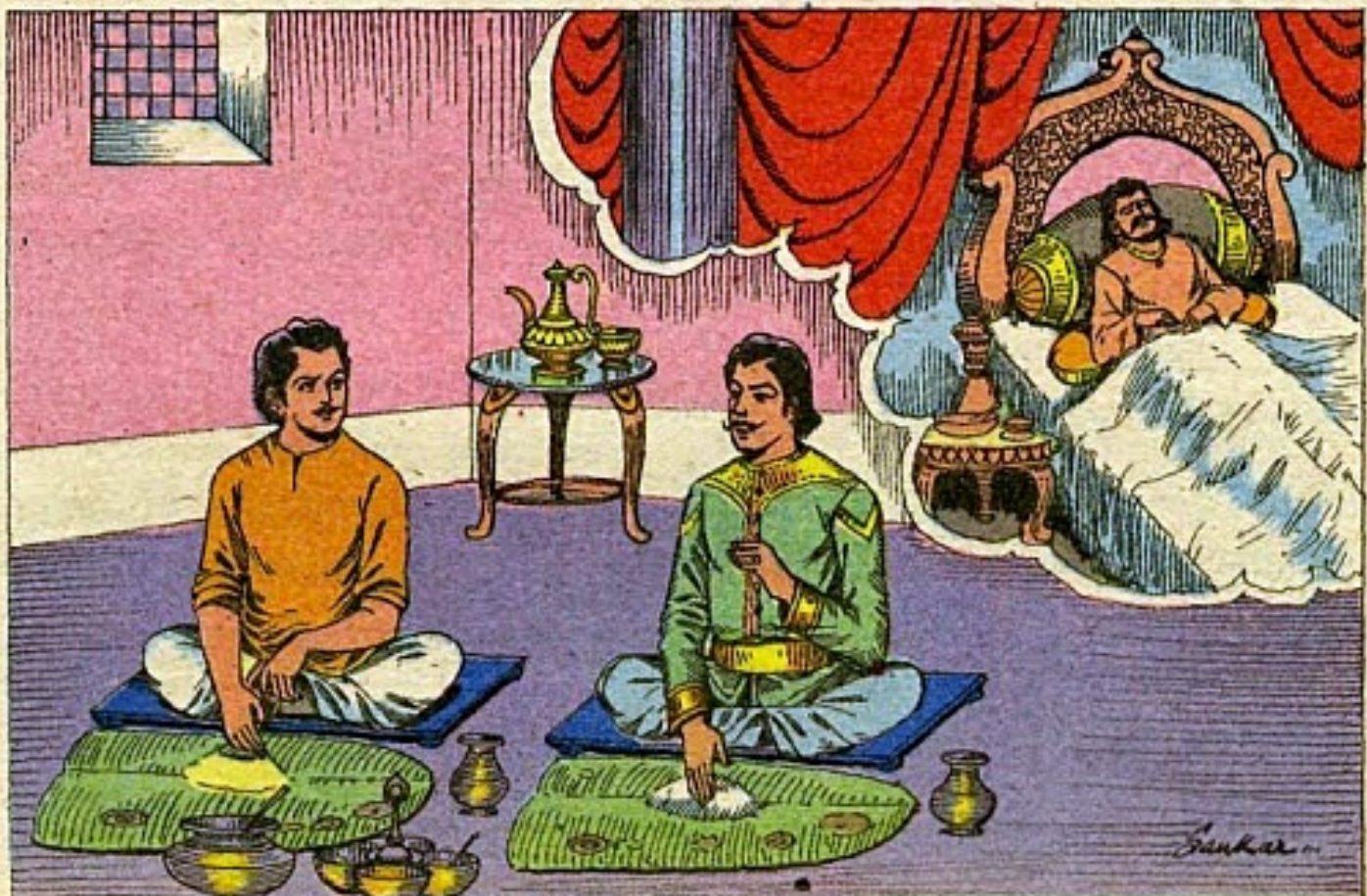
लेकिन इधर के वातावरण में बीज बिगड गया और उस में कीड़े पड़ गये । अब लाचार हो कर महाराजा ने ऐलान करवाया है कि यदि कोई उसका नासूर ठीक कर देगा तो उसे इनाम में आधा राज्य दे दिया जायेगा ।

यह सूचना पाते ही चंद्रकांत उसी क्षण वहाँ से राजधानी के लिए चल पड़ा । राजधानी में पहुंचकर उसने राजा के दर्शन किये और उसे आश्वस्त किया कि वह शीघ्र ही फूल लाकर उसके नासूर को ठीक करेगा ।

महाराजा ने चंद्रकांत को वह बिगड़ा बीज दिलवा दिया । चंद्रकांत वह बीज लेकर अपने घर लौटा और उसने घर के बगल में ही एक क्यारी तैयार करके उसे रोप दिया । जल्दी ही वह बीज अंकुरित हुआ और पौधे की शक्ल लेने लगा । फिर वहाँ एक कली दीख पड़ी और वह कली सोनल छाया से चमकने वाले फूल में बदल गयी ।

रात को जब देवकन्या वहाँ आयी तो उस फूल को देखकर बहुत खुश हुई । बोली, "वाह!क्या बढ़िया फूल है! इसे मैं पूजा के लिए ले जाऊँगी ।" और वह फूल तोड़ने के लिए आगे बढ़ी ।

लेकिन चंद्रकांत ने उसे रोक दिया । "नहीं, नहीं," वह बोला, "यह फूल तुम्हारे लिए नहीं है । यह राजा के लिए है । इसे मैं राजा के नासूर पर निचोड़कर लगाऊँगा और बदले में आधा राज्य पाऊँगा ।"

देवकन्या चंद्रकांत की बात सुनकर हैरान रह गयी । वह कभी सोच भी न सकती थी कि चंद्रकांत इतना बदल जायेगा । "मैंने तुम से वचन लिया था कि तुम इस बगीचे से मुझे कोई भी फूल तोड़ने दोगे! क्या तुम वह वचन भूल गये?" देवकन्या ने पूछा ।

"उस वचन को अब भूल जाओ । यहाँ बात आधा राज्य लेने की है ।" चंद्रकांत के उत्तर में काफी ज्यादा अभिमान

झलक रहा था ।

"अच्छा, तो यह बात है!" और इतना कहकर देवकन्या वहाँ से ग़ायब हो गयी ।

देवकन्या की इस प्रकार अवहेलना होने पर चंद्रकांत रत्ती भर भी विचलित नहीं हुआ । उसने वह फूल स्वयं तोड़ा और उसे लिये-लिये राजधानी पहुँचा । लेकिन राजधानी का परिदृश्य ही बदला हुआ था । लोग वहाँ जगह-जगह झुंड बनाये खड़े थे । चन्द्रकांत को पता चला कि महाराजा का देहांत हो चुका है ।

चंद्रकांत सकते में आ गया । वह वैसे ही वहाँ से लौट पड़ा । घर पहुँचा तो वहाँ का परिदृश्य भी बदला हुआ था । उसके बगीचे के सब फूल मुरझा गये थे और खेतों में फसल सूखी पड़ी थी । इसके बाद चंद्रकांत ने जो कुछ भी बोया, वहाँ अंकुरित नहीं हुआ ।

बैताल ने अपनी कहानी खत्म कर दी थी । अब वह बोला, "राजन्, बताइए, देवकन्या को चंद्रकांत पर क्यों गुस्सा आया? क्या इसलिए कि वह जानती थी कि चंद्रकांत राजा नहीं बन सकता? या इसलिए कि चंद्रकांत ने उसे फूल तोड़ने से मना किया था? देवकन्या होते हुए उसके लिए ऐसा करना क्य उचित था? इन संदेहों का यदि आप समधान नहीं देंगे तो आप का सिर फट जायेगा!"

विक्रम का उत्तर सटीक था—

"देवकन्या के व्यवहार में न कहीं द्वेष

था और न ही कहीं स्वार्थ । चंद्रकांत एक वक्त फटे हाल था और रोटी के लिए तरस रहा था । उसके पास पहनने को कपड़ा भी न था और न ही रहने के लिए कोई स्थान था । देवकन्या के वरदान से उसे सब कुछ मिला । देवकन्या ने तो केवल पूजा के फूल तो लेने की आज्ञा चाही थी जिस के लिए चंद्रकांत राज़ी हो गया था । लेकिन जैसे-जैसे उसकी हालत सुधरती गयी वह आलासी और स्वार्थी होता गया । इसीलिए उसने खेतीबाड़ी का काम मज़दूरों पर छोड़ दिया और फूलों की देखभाल खुद न करके मालियों के ज़िम्मे कर दी । और तो और, वह चौपाल पर गप्पबाज़ी करने लगा और अपना वक्त बरबाद करने लगा । आधा राज्य हथियाने के लालच में उसने उस देवकन्या की भी अवहेलना की जिसने उसका भाग्य बदल दिया था । यानी यह स्वार्थ की हद थी । ऐसा व्यक्ति यदि राजा बन जाता तो अपनी प्रजा का अहित ही करता । चंद्रकांत जब राजधानी पहुँचा था तो महाराजा का प्राण छोड़ना इत्तफाकन था । वास्तव में चंद्रकांत तो वरदान का फल उसी क्षण से खो चुका था जिस क्षण उसने देवकन्या को फूल तोड़ने से मना किया था, क्योंकि वह फूल तो नासूर ठीक करने वाली अपनी शक्ति खो चुका था । दूसरे शब्दों में एक अयोग्य व्यक्ति को वरदान देने की अपनी भूल देवकन्या समझ चुकी थी । लेकिन जो कुछ भी उसने किया, द्वेषवश नहीं किया । इस अंजाम का चंद्रकांत स्वयं ही ज़िम्मेदार था ।"

राजा विक्रम ने जैसे ही अपनी बात पूरी की, वैसे ही बैताल लाश के साथ अदृश्य हो गया और उसी पेड़ की शाखा से लटकने लगा जिससे वह पहले लटक रहा था । (कल्पित)

(आधारः एम.आर. कामेश की रचना)

उनके सपनों का भारत

भारत की आत्मा

स्वामी विवेकानंद (१८६३-१९०२) ने अपने जीवन का यह उद्देश्य बना लिया था कि वह भारत को इसकी काहिली, वहमों इत्यादि से बाहर लायेंगे । एक बहुत बड़े योगी होने के नाते वह यह भेद भी जानत थे कि भारत कैसे उठ सकता है, और वह भेद था भारत की धार्मिकता, उसकी आध्यात्मिकता को जगाना । उनका कहना था:

"हर राष्ट्र का हर व्यक्ति की तरह, एक ही ध्येय रहता है, और वही उसका केंद्र-बिंदु या मुख्य स्वर है जिससे दूसरे स्वर आकर मिलते हैं, और संगीत का सृजन करते हैं... अगर कोई राष्ट्र अपनी राष्ट्रीय थाती परे फेंकना चहता है, यानी सदियों से संजोयी शक्ति से मुक्ति चहता है, तो वह राष्ट्र खत्म हो जायेगा... किसी राष्ट्र की थाती उसकी राजनीतिक सत्ता हो सकती है, जैसी कि इंगलैंड की है । किसी अन्य राष्ट्र की वह थाती कला से जुड़ी हो सकती है । भारत में यह थाती धर्म के रूप में है । यही उसका केंद्र-बिंदु है और यही उसके जीवन के संगीत का मुख्य स्वर है ।"

धर्म से स्वामी विवेकानंद का आशय सच्चाई की खोज था, कर्म-काण्ड करना नहीं था । आओ, ज़रा अपने से पूछें कि हम अपने उस महान् चेता की अपेक्षाओं के कितने निकट हैं ।

क्या तुम जानते हो?

१. वह कौन-सा विदेशी है जिससे हमें पुरातन काल के एक महान् भारतीय महाराजा के बारे में काफी जानकारी मिलती है?

२. किस महाराजा का उसने उल्लेख किया है?

३. उस महाराजा की राजधानी कौन-सी थी?

४. विश्व का पहला हवाई जहाज़ कितनी ऊंचाई तक पहुंच सका? कितनी देर तक वह उड़ता रहा?

५. उड़ने वाला वह कौन-सा पक्षी है जो सब से बड़ा है?

विष्णु

भारत की पौराणिक कथाओं में ब्रह्म, विष्णु तथा शिव सबसे बड़े देवता माने जाते हैं। दूसरे शब्दों में वे ईश्वरीय शक्ति के तीन रूप माने जाते हैं, यानी सृष्टि, सृष्टि का पालन और फिर संहार ताकि परिवर्तन संभव हो सके।

वेदों में विष्णु को तीन लंबे डग भरते बताया गया है। उन तीन डगों में पृथ्वी, आकाश और पाताल, सभी समा जाते हैं। जब बहुत बड़े परिवर्तनों का समय आता है, तब विष्णु विभिन्न रूपों में अवतार लेते हैं। अब तक उन्होंने नौ अवतार लिये हैं। दसवें

अवतार को अभी अवतरित होना है । उन्हें कल्कि नाम से पुकारा जायेगा । वह इस धरती पर अज्ञान और बर्बरता का नाश करेंगे ताकि आध्यात्मिक रूप से जगी मानव जाति का आविर्भाव हो सके ।

वास्तुकला और चित्रकला में उन्हें बड़ा सुंदर मुकुट पहने दिखाया गया है । इसके अलावा उनके ऊपर के एक हाथ में शंख, दूसरे में चक्र और नीचे के दो हाथों में गदा और पद्म लिये दिखाया गया है ।

उनके दायें हमेशा देवी लक्ष्मी और बायें पृथ्वी रहती हैं । लेकिन स्वयं विष्णु को कई रूपों में दिखाया गया है—कभी सर्प-शैया पर विश्राम करते हुए, कभी गरुड़ की सवारी करते हुए, और कभी...

विष्णु के विभिन्न नाम हैं । जैसे अनंत, वैकुण्टेश्वर, वेंकटेश्सवर, केशव, अच्युत, माधव, पीतांबर, जनार्दन, विश्वंभर, दामोदर, चतुर्भुज, मुकुंद, मुरारी, नारायण, पद्मनाभ, हरि तथ यज्ञेश्वर ।

कुछ खबरें भी

बहरों का नगर

कलकत्ता महानगर में बेहद शोर है । विशेषज्ञों का कहना है कि अगर यह शोर ऐसे ही बढ़ता रहा तो कुछ ही बर्षों में वहाँ के हज़ारों-लाखों लोग बहरे हो जायेंगे ।

लेकिन एक बात तो है—लोगों के सुनने की क्षमता बड़ी तेज़ी से कम होती जा रही है । कलकत्ता, दरअसल भारत का सब से शोर वाला नगर है, और इसका कारण है वहाँ का यातायात, वहाँ के छोटे और बड़े कारखाने और फिर वहाँ के बतियाते लोग । जो हालत आज कलकत्ता की है वह कल किसी अन्य नगर की भी हो सकती है ।
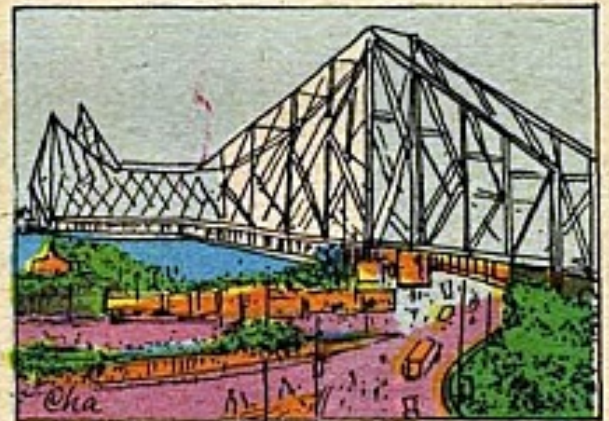
सब से पुराना कुआँ

अब तक हम जिसे दुनिया का सब से पुराना कुआँ कहते थे, वह तुर्की में स्थित था । लेकिन हाल ही में इज्राइल में एक और कुआँ मिला है जिसे ८००० वर्ष पुराना बताया जा रहा है । दूसरे शब्दों में यह कुआँ पाषाण युग का है ।

लेकिन एक बात तो है—कि उस ज़माने के लोगों को भी पानी के स्रोतों की गहरी जानकारी थी ।

आओ साहित्य की दुनिया में विचरण करें

१. कथा-कहानियों में बार-बार उल्लेख पाने वाला पात्र रॉबिन हुड वास्तविक जीवन में किसके सब से निकट था?

२. वह विख्यात लेखक कौन है जिसने रॉबिन हुड को आधार बनाकर एक उपन्यास लिखा? उस उपन्यास का नाम क्या है?

३. उसी लेखक के दूसरे प्रसिद्ध उपन्यास कौन-से हैं?

४. रवींद्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि' का बंगला से अंगरेजी में अनुवाद किसने किया?

५. इस पुस्तक के अंगरजी संस्करण की भूमिका किसने लिखी?

६. पहले वर्ष ही अंगरेजी संस्करण कितनी बार फिर छपा?

उत्तर

क्या तुम जानते हो?

१. चीनी यात्री फाहियान ।

२. विक्रमादित्य ।

३. उज्जैयनी ।

४. १९०३ में राइट ब्रदर्स ८ से १२ फुट की ऊंचाई पर उड़े और १२ सैकंड तक उड़ते रहे ।

५. उत्तर अफरीका का शुतुर्मर्ग ।

साहित्य

१. स्कॉट लैंड का रॉब रॉय ।

२. सर वाल्टर स्कॉट (१७७१-१८३२) उपन्यास का नाम है 'रॉब रॉय' ।

३. 'आइवनहो,' 'द तलिस्मां,' 'ए लिजेंड ऑफ मांटरोज़,' इत्यादि ।

४. स्वयं कवि ने ही ।

५. डब्ल्यू. बी. यीट्स ।

६. तेरह बार, मार्च १९१३ और दिसंबर १९१३ के दौरान ।

श्रीरामकृष्ण परमहंस
(६)

उन दिनों बंगाल में कई विभूतियाँ थीं। उनमें एक केशवचंद्र सेन थे। उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना की थी। एक दिन श्रिरामकृष्ण उनके यहाँ गये और वहाँ पहुँचने के कुछ ही देर बाद समाधि की अवस्था में चले गये। केशवचंद्र और उनके समाज पर इसका बहुत गहरा असर पड़ा।

श्रीरामकृष्ण के मन में एक बार यह इच्छा जागी कि वह श्री चैतन्य को अपने भक्तों (वैष्णव) के साथ भजन गाते हुए और वहाँ से निकलते हुए देखें। एक दिन वाकई यह घट गया। श्रीरामकृष्ण को श्रीचैतन्य अपने भक्तों के साथ भजन-गान करते हुए वहाँ से गुज़रते दिखई दिये। यह अद्‌भुत दृश्य था। वह इसे देखते-देखते उसी में खो गये।
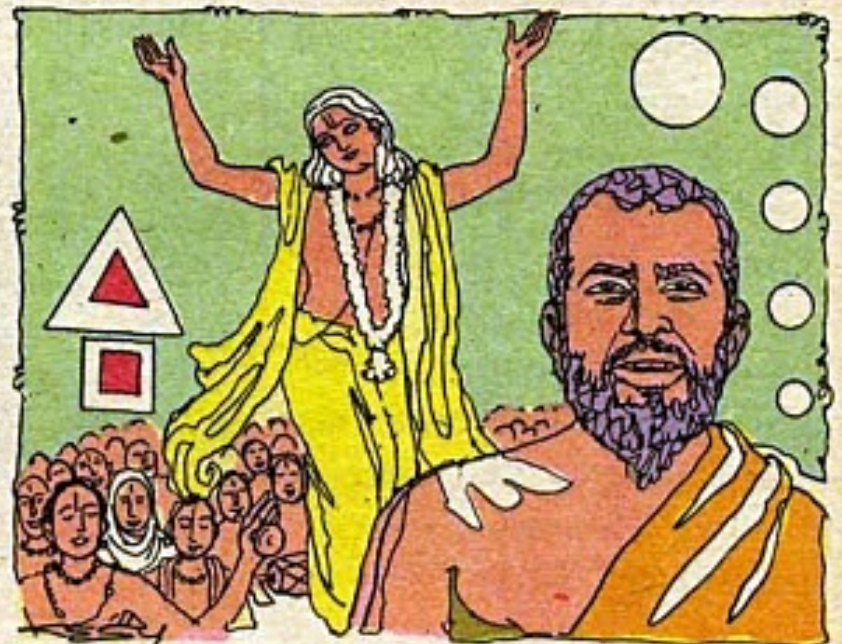
नवंबर १८८० की बात है। भविष्य के विवेकानंद, यानी नरेंद्रनाथ, श्रीरामकृष्ण से भेंट करने आये। उन्हें देखते ही श्रीरामकृष्ण खुशी से झूम उठे। इससे नरेंद्रनाथ को थोड़ी परेशानी हुई। उन्हें लगा जैसे कि वह महान् विभूति विश्रृंखलित हो गयी है। पर फिर उन्होंने असलियत जानी और धीरे-धीरे उस महाप्राण के प्रति आकर्षण से बंधते गये।
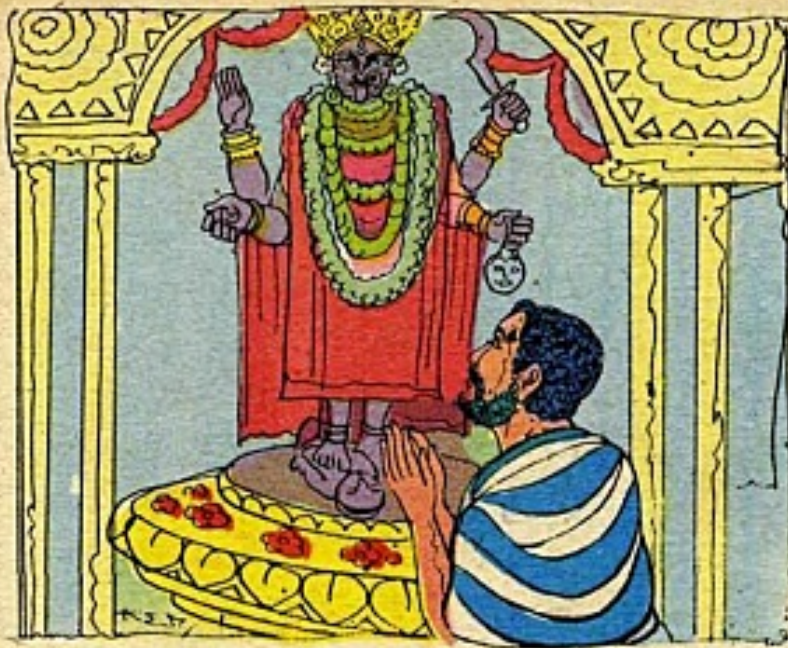
अब तक नरेंद्रनाथ के पिता का देहांत हो चुका था। पिता के देहांत के बाद नरेंद्रनाथ के परिवार में रोज़ी-रोटी की समस्या आ खड़ी हुई थी। स्थिति बड़ी विकट थी। कोई चारा न देख उन्होंने श्रीरामकृष्ण से याचना की कि वह उनके लिए माँ काली से प्रार्थना करें। यह काम खुद क्यों नहीं करते? – श्रीरामकृष्ण ने उन्हें सलाह दी। नरेंद्रनाथ ने माँ काली से प्रार्थना की, लेकिन धन के लिए नहीं, ज्ञान के लिए।

उन्हीं दिनों श्रीरामकृष्ण की उस समय के महान समाज सुधारक और शिक्षा शास्त्री ईश्वरचंद्र विद्यासागर से भेंट हुई। भेंट के दौरान किसी अन्य व्यक्ति ने उनसे प्रश्न किया, "क्या ज्ञान ग्रहण करने वाला व्यक्ति बोलता भी है?" "क्यों नहीं," उनका उत्तर था, "मधु का पान करते समय ही मधुप या भंवरा थोड़ी देर के लिए चुप रहता है। जब पेट-भर पान कर लेता है तो फिर गुंज़ार करने लगता है।"
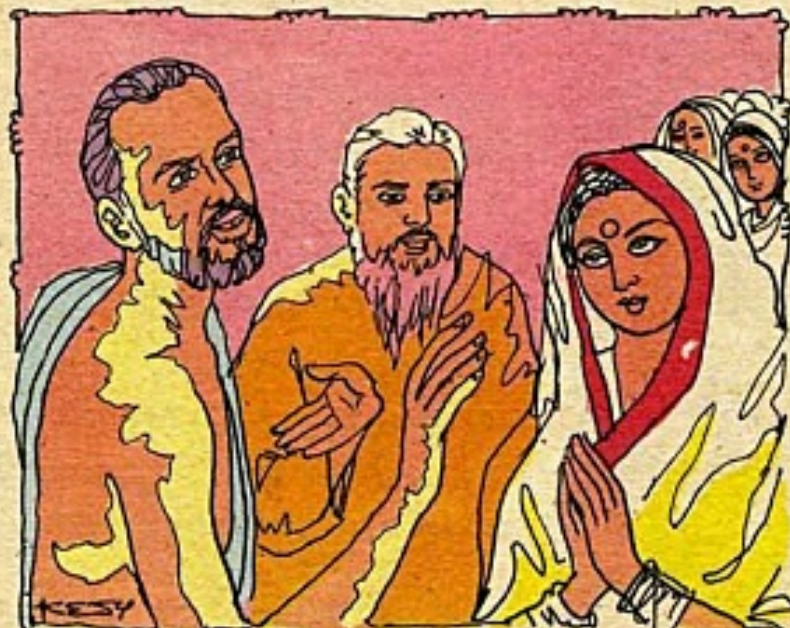
उस समय के अनेक जाने-माने व्यक्ति उनसे भेंट करते रहते थे। उनमें देवेंद्रनाथ टैगोर, विजयकृष्ण गोस्वामी और स्वामी दयानंद भी थे। नाट्य कलाकार गिरीशचंद्र घोष तो उनके शिष्य ही बन गये थे। श्रीरामकृष्ण उनके नाटकों को बहुत पसंद करते और उन्हें तथा उनके साथियों को प्रायः आशीर्वाद देते।

इस महापुरुष के बारे में दूर-दूर तक धूम मच गयी थी। कई लोगों की तो, इनके संपर्क में आने से, जीवन पद्धति ही बदल गयी थी। उनका ज्ञान, उनकी सादगी और उनकी दिव्यवाणी, सभी को प्रभावित करती। यह जहाँ भी जाते, लोग भारी संख्या में उमड़ पड़ते।
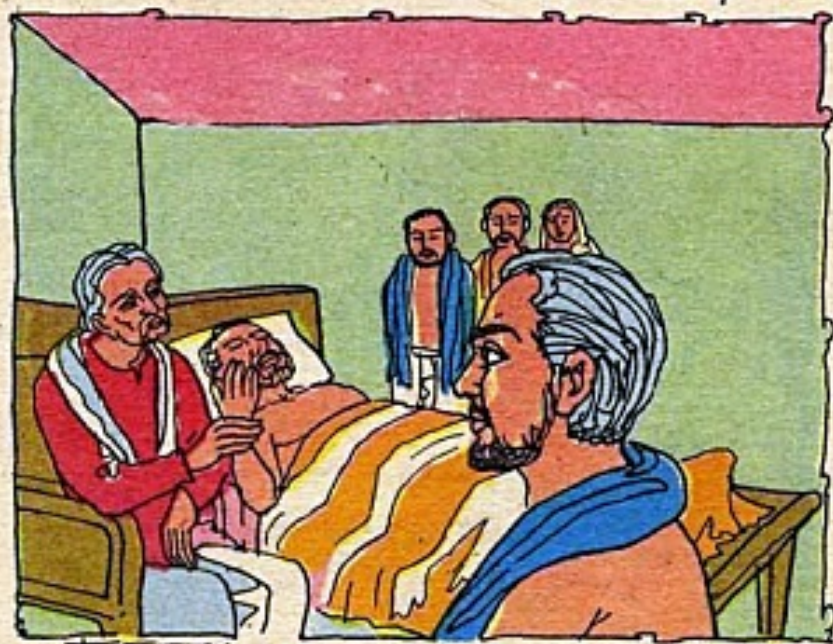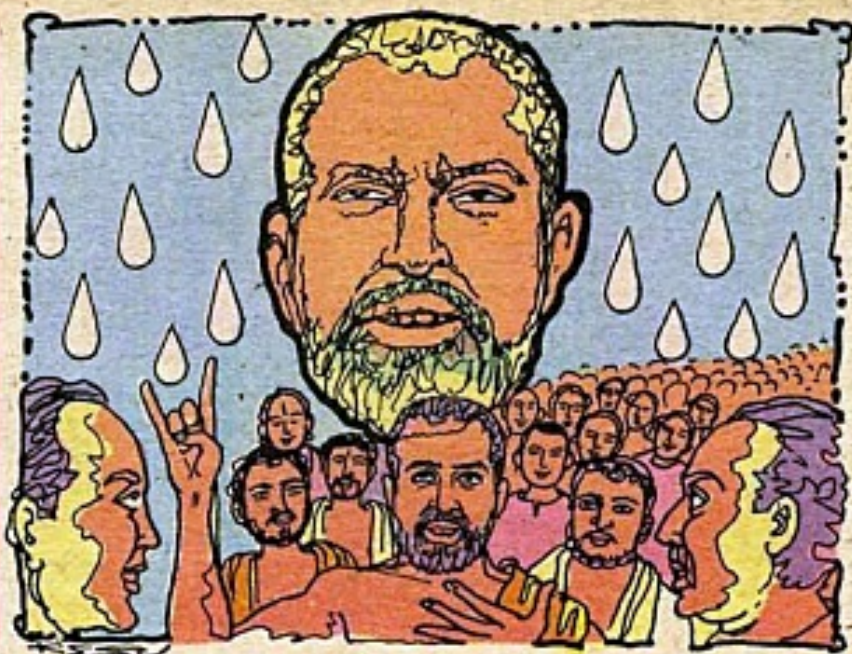
१८८५ में श्रीरामकृष्ण के गले में कुछ तकलीफ शुरू हो गयी। वह पीड़ा से परेशान रहने लगे। डाक्टरों ने उन्होंने सलाह दी कि उन्हें ज़्यादा नहीं बोलना चाहिए और समाधि में भी नहीं उतरना चाहिए। पर पूछने वाले तब कोई प्रश्न कर देते तो उन्हें उत्तर देना ही पड़ता। पवित्र आत्मा होने की वजह से यदि उन्हें मुँह से भगवान् का नाम लिकलता, तब उनकी समाधि भी लग जाती।

श्रीरामकृष्ण का स्वास्थ्य बहुत बिगड़ चुका था। कलकत्ता के निकट ही काशीपुर के बगीचे थे। उन्हें वहीं ले जाया गया। महेंद्रलाल सरकार जैसे समर्पित चिकित्सक उनका इलाज कर रहे थे। पर फ़र्क कुछ भी न पड़ा। तब उन्होंने एक दिन नरेंद्रनाथ को अपने पास बुलाया और उन में अपनी अदभुत शक्ति भरने के उद्देश्य से उनकी तरफ एकटक देखना शुरू कर दिया।
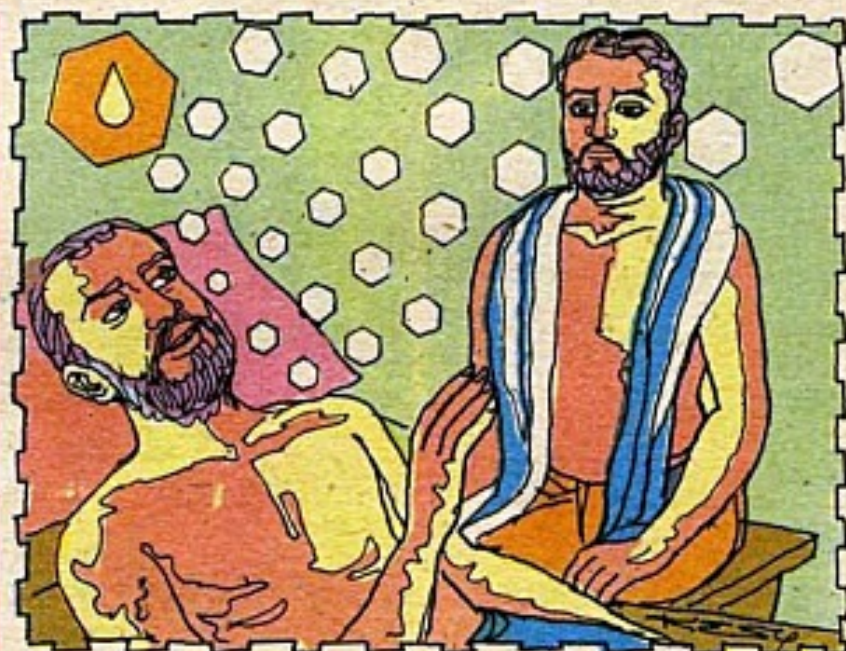
२६ आगस्त १८८६ को श्रीरामकृष्ण परमहंस ने अपनी देह त्याग दी । उसी दिन शाम के समय काशीपुर घाट पर उनका पर्थिव शरीर अग्नि के हवाले कर दिया गया । इस तरह इस महापुरुष की इहलीला समाप्त हुई । पर इसके बाद भी उनक प्रभाव मंडल बढ़ता ही गया, और हर कोई उन्हीं का नाम लेने लगा ।

अब श्रीरामकृष्ण के अनुयायी श्रीरामकृष्ण की पत्नी, माँ शारदा देवी को दखकर ही संतोष पा लेते । वे उनके पास आते और एक माँ का स्नेह पाकर लौट जाते ।

नरेंद्रनाथ को अपने गुरु श्रीरामकृष्ण से जो स्नेह और विश्वास प्राप्त हुआ था, उन्होंने उसे ऐसे ही नहीं जाने दिया । उस स्नेह और विश्वास ने दिव्य ज्योति का रूप ले लिया था । नरेंद्रनाथ अब स्वामी विवेकानंद के रूप में जाने जाने लगे थे । श्रीरामकृष्ण के शब्द अब स्वामी विवेकानंद के माध्यम से दूर-दूर तक, चारों दिशाओं में, मानव जाति में स्फूर्ति भर रहे थे, और आज भी भर रहे हैं ।

(समाप्त)

बहू का चुनाव

गंगानगर गाँव में धर्मेंद्र नाम का एक रईस रहता था । वह हमेशा दूसरों की भलाई करता । उसका एक बेटा था विशाल । विशाल रूप-गुण संपन्न था । उसकी उम्र अब शादी लायक हो चुकी थी । धर्मेंद्र अपने घर में एक ऐसी बहू लाना चाहता था जो उसके बेटे की तरह रूप-गुण संपन्न हो और घर की मर्यादाओं को आगे बढ़ाये ।

उसी गाँव में त्रिलोक नाम का एक व्यक्ति था । वह धर्मेंद्र का दोस्त भी था । वह घर पर लगाये गये करघों पर ज़री की साड़ियाँ बनवाता और ओस-पड़ोस के गाँवों में उन्हें धनी लोगों को बेचता । इसलिए उसे गंगानगर के ओस-पड़ोस के गाँवों में रहने वाले अनेक धनिकों के बारे में काफी जानकारी थी ।

एक दिन त्रिलोक ने धर्मेंद्र से पूछा, "सुना है, तुम विशाल के लिए लड़की ढूंढ़ रहे हो? मैं तुम्हें दो-एक लड़कियां बता सकता हूँ । एक तो सीतापुर में रामानंद की बेटी कमला है । काफी सुंदर है । दूसरी लखीमपुर में विश्वेश्वर की बेटी सरिता है । वह भी उतनी ही सुंदर है । तुम और विशाल एक बार इन लड़कियों को देख लो । दोनों में से कोई भी विशाल के योग्य होगी । उधर रामानंद और विश्वेश्वर भी तुम्हारी तरह ही हर प्रकार से संपन्न हैं । यह रिश्ता बढ़िया रहेगा!"

त्रिलोक के कहे अनुसार धर्मेंद्र अपने बेटे के साथ दोनों गाँवों में गया और वहाँ कमला और सरिता, दोनों को देखा । दोनों एक-दूसरे से बढ़कर थीं । विशाल किसी निर्णय पर पहुँच नहीं पा रहा था । इसलिए

निर्मला पांडेय

उसने अंतिम निर्णय अपने पिता पर छोड़ दिया। धर्मेंद्र भी अपने पुत्र की तरह असमंजस में पड़ गया और उसने इस मामले में अपने पुत्र त्रिलोक से मदद चाही।

वह त्रिलोक से बोला, "त्रिलोक, इन दोनों के बीच चुनाव करना तो एक समस्या बन गया है। दोनों अपनी-अपनी तरह बेजोड़ हैं। लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि बाहरी सुंदरता शाश्वत नहीं होती। इसलिए शायद इन दोनों की परीक्षा लेना ज़रूरी हो और इस परीक्षा में जो पूरी उतरेगी, वही मेरे बेटे की बहू बनने के योग्य होगी। कहो, क्या ख्याल है? मुझे इस में तुम्हारी मदद भी चाहिए।"

त्रिलोक अपने मित्र की बात सुनकर धीरे से मुस्करा दिया, "भई, तुम्हारी ख्याति तो पहले ही काफी है कि तुम एक धर्मनिष्ठ और धर्म का पालन करने वाले व्यक्ति हो! तुम्हारी मदद करके तो मैं अपने को धन्य ही समझूँगा। बोलो, कैसी मदद चाहिए?"

धर्मेंद्र ने त्रिलोक को सारी बात समझा दी। त्रिलोक ज़री की नयी साड़ियाँ लेकर सीतापुर पहुँचा। वहाँ पहले वह सेठ रामानंद के यहाँ गया। उसके आने की खबर पाकर कमला तुरंत बाहर आयी और त्रिलोक से साड़ियाँ दिखाने के लिए बोली। "बेटा, जैसे ही मेरी साड़ियाँ तैयार होती हैं, मैं पहले तुम्हारे पास ही लाता हूँ। लो, देखो!" और यह कहकर वह उसे एक-एक साड़ी दिखाने लगा।

ज़री की नयी साड़ियाँ देखकर कमला खुशी से फुरफुरा उठी। तब त्रिलोक ने खुद ही एक साड़ी उसकी तरफ बढ़ाते हुए कहा, "यह लो, बेटी। गज़ब की चीज़ है। बहुत शानदार ज़री है इसकी। पहनोगी तो याद करोगी!"

कमला ने वह साड़ी ले ली और बोली, "पर इसके साथ चोली का कपड़ा तो है ही नहीं! खैर! चोली का कपड़ा भी रहता तो बढ़िया होता!"

इस पर त्रिलोक अपना सर खुजलाने लगा। फिर बोला, "क्षमा करना बेटी, वह

कपड़ा तो कर्घे पर है । उसे तैयार होने में दस दिन लगेंगे । तैयार होते ही ले आऊँगा ।" और साड़ी के दाम लेकर वह वहाँ से चला आया ।

सीतापुर से वह लखीमपुर पहुँचा । वहाँ उसकी भेंट विश्वेश्वर की बेटी सरिता से हुई । सरिता को भी वे साड़ियाँ पसंद आयीं, और उसे भी उसने एक साड़ी देते हुए कहा, "यह सड़ी बहुत बढ़िया है । पहनोगी तो याद रखोगी । पर इसके साथ का चोली का कपड़ा एक हफ्ते में तैयार होगा । तुम कहीं और से न खरीदना '। मैं खुद ही तुम्हें पहुँचा दूँगा ।"

सरिता ने साड़ी के दाम चुकता कर दिये, और त्रिलोक अपने गाँव लौट आया । फिर दो हफ्ते बाद वह चोली का कपड़ा लेकर वापस उनके पास गया ।

पहले वह कमला के पास पहुँचा, और उससे बोला, "बेटी, तुम्हारी साड़ी से मेल खाती चोली का कपड़ा ले आया हूँ । देख लो ।"

"इसकी ज़रूरत नहीं, त्रिलोक चाचा," कमला बोली । "मैंने कहीं और से उस कपड़े का इंतज़ाम कर लिया था ।"

"ठीक है बेटी, चलता हूँ," त्रिलोक उसे संबोधित करते हुए बोला, और फिर वह लखीमपुर की ओर बढ़ चला । लखीमपुर वह अभी मुश्किल से पहुंचा ही था कि सरिता की नज़र उस पर पड़ी और वह बोली, "कपड़ा ले आये, चाचा?"

"हाँ बेटी, ले तो आया हूँ । पर कुछ दिन की देर हो ही गयी । कहीं तुम ने कहीं और से तो नहीं ले लिया?" त्रिलोक ने प्रश्न किया ।

"तुम बिलकुल भुलक्कड़ हो, चाचा!" सरिता ने हंसते हुए कहा, "चोली का कपड़ा तो पहले ही साड़ी के साथ था । तुम ने शायद देखा ही नहीं । यह देखो," और उसने कपड़े का वह टुकड़ा उसके सामने रख दिया । फिर बोली, "साड़ी के दाम तो तुम ने ले लिये थे । इस कपड़े के दाम नहीं लिये थे । वह भी ले लो ।"

"अरे उम्र ढल रही है न, इसीलिए!"

त्रिलोक हंसने लगा, और फिर उसने उस कपड़े के टुकड़ा के दाम भी ले लिये, और वहाँ से तुरंत अपने गाँव की ओर लौट पड़ा।

गाँव पहुँचकर त्रिलोक सीधे धर्मेंद्र के यहाँ पहुँचा, और कमला तथा सरिता को लेकर जो उसके साथ बीता था उसे कह सुनाया।

त्रिलोक की बात सुनकर धर्मेंद्र हँसने लगा। "वाह, समस्या का हल मुझे मिल गया। अब तो अच्छा मुहूर्त्त निकलवाकर मंगनी के लिए चलना होगा!"

"लेकिन लड़की कौन सी पसंद थी? यह तो बताओ," त्रिलोक आश्चर्य से भर उठा।

"साड़ियाँ तुमने दोनों को वैसे ही दी थीं न?" धर्मेंद्र ने प्रश्न किया।

"बिलकुल," त्रिलोक का उत्तर था।

"और तुम यह भी जानते थे कि उन दोनों ही साड़ियों के साथ चोली का कपड़ा है?" धर्मेंद्र ने फिर प्रश्न किया।

"हाँ," त्रिलोक ने उत्तर दिया।

"तब!" धर्मेंद्र ने मित्र की तरह एकटक देखा।

"अरे, अब समझा," त्रिलोक बोला, "तुम्हारी बहू सरिता बनेगी!"

"बेशक!" धर्मेंद्र का उत्तर था। "क्योंकि वह सुंदर होने के साथ-साथ इमानदार भी है। कमला तो चोली के कपड़े को ऐसे ही हड़प जाना चाहती, और इसीलिए उसने बात बनायी कि उसने कहीं और से इंतज़ाम कर लिया है। खैर! छोड़ो! अब यह बताओ कि क्या दाम थे उस कपड़े के जो कमला को तुम ने दिया?"

"क्या तुम उसके दाम चुकाओगे?" त्रिलोक ने प्रश्न किया। "क्या तुम बहू के चुनाव में मेरी थोड़ी-सी भी मदद लेना नहीं चाहते?"

इस पर धर्मेंद्र ने उसे गले लगा लिया और दोनों मित्र विशाल के विवाह की तैयारी में लग गये।

बालि के प्राण अभी तक छूटे नहीं थे। उसने आँखें खोलकर इधर-उधर देखा। उसके पास सुग्रीव खड़ा था। उसने सुग्रीव को संबोधित करते हुए कहा–

"मैं ने तुम्हें राज्य से निकाला तथा तुम्हारी पत्नी तुम से छीनी। पर इस में दोष मेरा नहीं। यह दोष हमारे भाग्य का है। मैं तब अपनी बुद्धि और विवेक खो चुका था। अब मैं प्राण छोड़ रहा हूँ। अब तुम राज-पाट संभालो। यही मेरी अंतिम इच्छा है। तुम इसे पूरा करो। अंगद मुझे अपने प्राणों से भी प्यारा है। तुम उसे अपना ही बेटा समझो। उसकी पूरी देख-भाल करो। तुम्हारे सिवाय अब उसका कोई नहीं। वह तुम्हारे समान पराक्रमी है। हर स्थिति में वह तुम्हारी सहायता करेगा। सुषेण की पुत्री और अंगद की माता तारा सुतीक्ष्ण बुद्धि वाली है। आने वाली विपदाओं का उसे पहले से ही आभास हो जाता है। तुम उसके कहे अनुसार चलो, तुम्हें कोई कष्ट नहीं होगा, वरना हो सकता है तुम्हें अपनी जान से भी हाथ धोने पड़ें। मेरे गले में देवेंद्र द्वारा दी हुई कांचनमाला है। तुम उसे पहन लो। मेरे प्राण त्याग देने पर
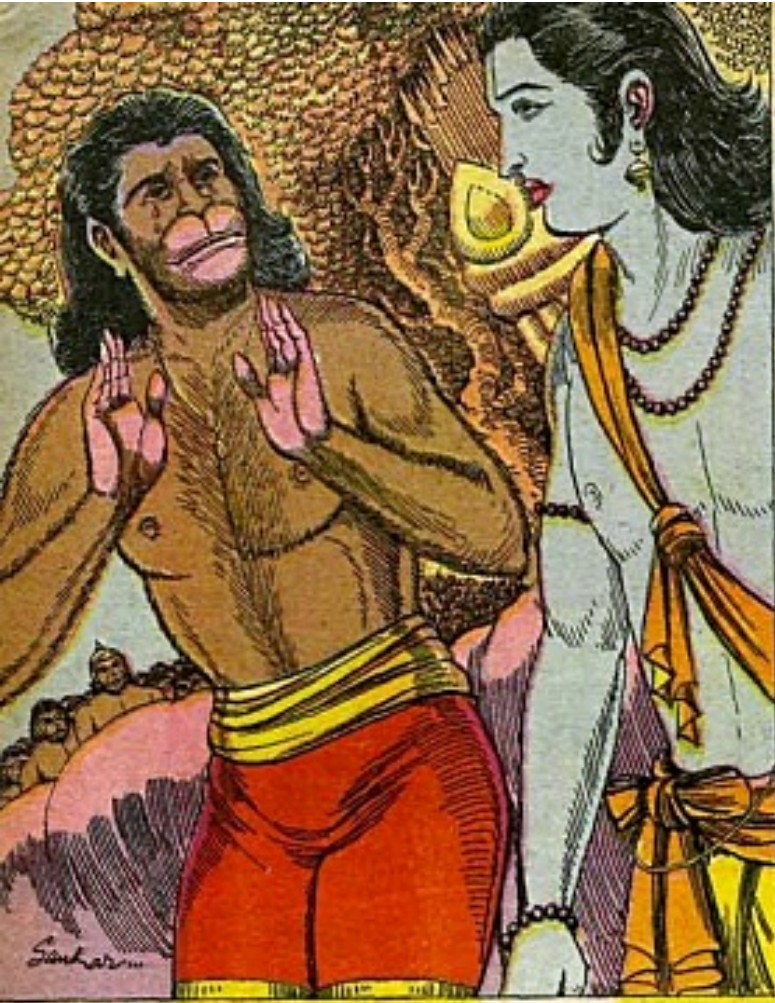
यह निष्प्रभ हो जायेगी । उसे मेरे गले से जल्दी से उतार लो ।"

सुग्रीव ने बालि की हर बात पर ग़ौर किया और उसके गले से कांचनमाला उतारकर अपने गले में पहन ली ।

अब बालि ने अंगद को संबोधित किया—

"जिस प्रकार तुम मेरे प्रति समर्पित रहे, उसी प्रकार तुम सुग्रीव के प्रति रहोगे । सुग्रीव के शत्रुओं से तुम किसी प्रकार का मेल-मिलाप न रखना । सुग्रीव का तुम्हें जो भी आदेश मिले, उसे तुम भक्ति-भाव से पूरा करना । किसी के साथ बेहद दोस्ती करना या बिलकुल ही न करना, दोनों ग़लत हैं ।"

और यही सब कहते-कहते बालि ने प्राण त्याग दिये । उसके प्राण त्यागते ही चारों दिशाओं में कोहरम मच गया । सभी वानर बुरी तरह रो रहे थे, और बालि के पराक्रमों का बखान कर रहे थे । गोलभ नामक गंधर्व के साथ बालि ने पंद्रह वर्ष तक युद्ध किया था, और उसे परास्त करके उसका वध कर दिया था । बालि के रहते वानरों को कहीं से भी किसी प्रकार का खतरा न था ।

पति का स्मरण करते तारा भी बहुत रोयी । उसनें नील से कहा कि वह बालि के वक्षस्थल से बाण खींच निकाले । अंगद से उसने कहा कि वह अपने पिता के पांवों को छुए और नमन करे । तारा के दु:ख से सुग्रीव भी विह्वल हो उठा । उसे अपने पर खेद था कि उसी के कहने पर राम ने उसका वध किया । वह भीगी आंखों से राम के निकट गया, और बोला:

"हे राम, तुमने अपना वचन पूरा किया । तुमने बालि का वध कर दिया । तुम ने मुझे राज्य भी दिलवा दिया । लेकिन मेरे भीतर जीने की अभिलाषा खत्म हो गयी है । मैं वानरों और तारा को इस प्रकार रोते हुए नहीं देख सकता । मुझे इस राज्य की ज़रूरत नहीं । पहले बालि से प्रताड़ित होकर मैंने उसकी मौत चाही, अब उसकी मौत हो चुकी है तो मुझे

पश्चात्ताप सता रहा है । मैं अपना बाकी जीवन ऋष्यमूक पर बिता देता तो वही ठीक रहता । मुझे तो अब स्वर्ग की भी अभिलाषा नहीं रही । बालि ने मुझे कष्ट दिये, पर मेरे प्राण तो नहीं लिये थे । मैंने तो उसके प्राण ही ले लिये । कितना जघन्य पाप किया मैं ने! मैं तो युवराज बनने के योग्य भी नहीं हूँ, राजा कैसे बनूँगा? मुझे भी बालि के साथ चिता पर जल मरना चाहिए । वानर तुम्हारी सहायता कर देंगे । वे सीता का पता लगा लेंगे ।''

उधर तारा भी विलाप करते हुए राम से बोली –

''जिस तीर से तुम ने मेरे पति का वध किया है, उसी तीर से मेरा भी वध कर दो । मैं जीना नहीं चाहती । मैं अपने पति के पास ही जाना चाहती हूँ । मेरे बिना उसे चैन नहीं मिलेगा । सीता-वियोग से जिस प्रकार तुम दुःखी हो, स्वर्ग में उसी प्रकार बालि भी मेरे बिना दुःखी होगा । यदि तुम मेरे भी प्राण ले लोगे, तो बालि-वध से तुम मक्त हो जाओगे!''

राम ने तारा का प्रलाप सुना तो उन्हें भी दुःख हुआ । फिर भी उन्होंने उसे सांत्वना देते हुए कहा, ''तुम एक वीर पत्नी हो । तुम्हें यों दुःखी नहीं होना चाहिए । जिस प्रकार बालि के रहते सुख से थी, उसी प्रकार तुम अब सुखी रहोगी । तुम्हारा पुत्र अंगद युवराज बनेगा!''
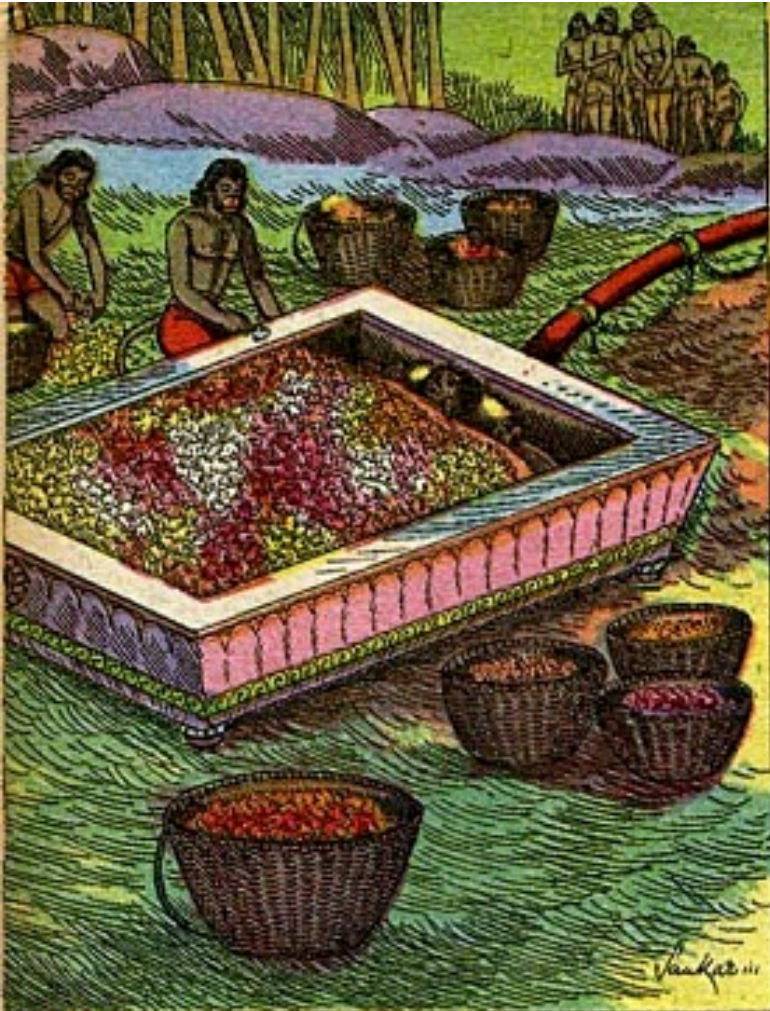
अब राम वानरों को संबोधित कर रहे थे, "मैं समझ रहा हूँ आप लोगों का दु:ख बहुत गहरा है । पर रोने-प्रलाप करने से कोई मृत व्यक्ति वापस नहीं आता । इसलिए वह काम करो जिससे बालि को ऊर्ध्व-लोक प्राप्त हो ।"

इधर लक्ष्मण ने भी सुग्रीव को सांत्वना दी और कहा, "हे सुग्रीव, बालि का दाह संस्कार हो जाना चाहिए । उसका प्रबंध करो । सूखी-लकड़ियाँ और चंदन आदि मंगवाओ । अंगद को ढारस दो ताकि वह अपने पिता की मृत देह में अग्नि दे सके । किष्किंधा का भार अब तुम पर ही है । इसलिए तुम्हारे रोने से काम नहीं चलेगा । अंगद को कहो कि वह फूल, वस्त्र, घी, तेल, गंधद्रव्य तुरंत मंगवाये । एक पालकी भी चाहिए । और बालि के मृत शरीर को ढोने के लिए कुछ वानर भी चाहिए ।"

लक्ष्मण की बात तार भी सुन रहा था । वह पालकी लाने के लिए तुरंत किष्किंधा पहुँचा और पालकी के साथ वापस आ गया । सुग्रीव और अंगद ने बालि की मृत देह को पालकी में रखा । फिर उसपर ढेर सारे फूल बिछाये और उसे खूब सजाया । जिस रास्ते से पालकी गुज़र रही थी, वहाँ आगे-आगे फूल बिखेरे जा रहे थे । शव यात्रा में अंगद और तार इत्यादि के अलावा और भी रिश्ते-नातेदार थे ।

एक झरने के निकट रेत में चिता तैयार की गयी । दाहकर्म पूरा हुआ तो जल-तर्पण किया गया । राम स्वयं सारी व्यवस्था की देख-रेख कर रहे थे ।

सुग्रीव नहाकर, गीले कपड़ों समेत राम तथा लक्ष्मण के पास आया । उसके साथ और वानर भी थे । तब हनुमान् ने राम से कहा, "हे राम, आपकी कृपा से सुग्रीव को राज-पाट मिल गया है । अब आपकी आज्ञा हो तो वह किष्किंधा में प्रवेश करे । वहाँ उसका विधिवत् राज्याभिषेक होगा । राज्याभिषेक हो जाने के बाद वह

आपका मर्यादानुरूप सम्मान करेगा। इसलिए आप से विनती है कि आप ही किष्किंधा चलकर उसका राजतिलक करवायें। इससे हम वानरों को बहुत प्रसन्नता होगी।"
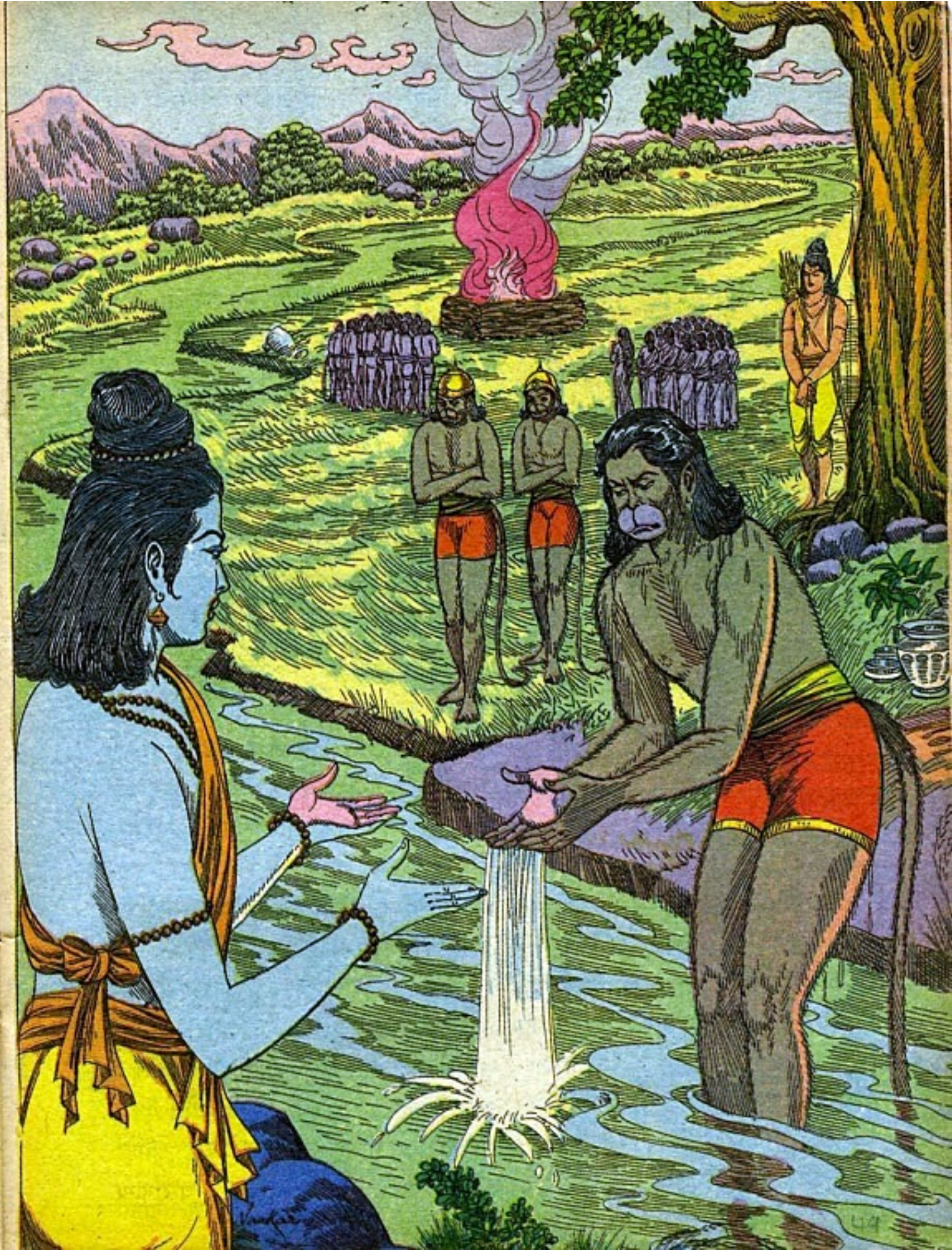
राम ने हनुमान् को समझाया, "हे हनुमान्, अपने पिता का आदेश पालन करते हुए मैं चौदह बर्ष का वनवास काट रहा हूँ। मुझे किसी नगर या ग्राम में प्रवेश करने की आज्ञा नहीं। इसलिए तुम लोग ही सुग्रीव का राजतिलक करो और अंगद को युवराज बनाओ। श्रावण मास आरंभ हो चुका है। चार महीनों तक अब वर्षा होती रहेगी। इसलिए युद्ध तो अब हो नहीं सकता। अच्छा हो तुम सब किष्किंधा लौट जाओ। लक्ष्मण और मैं इसी पहाड़ पर रहेंगे। यहाँ की गुफा काफी विशाल है। यहाँ रहने में हमें कोई दिक्कत नहीं होगी। पास ही जल और पद्म हैं। अब कार्तिक का महीना आने पर ही हम रावण से युद्ध करने की स्थिति में होंगे।"

राम से आज्ञा पाकर सुग्रीव किष्किंधा के लिए चल पड़ा। उसके साथ अनेक वानर थे। किष्किंधा पहुँचकर वह वानर प्रमुखों से मिला। उन्हीं के परामर्श से वह तारा को सांत्वना देने बालि के अंतःपुर में गया।

सुग्रीव जब तक अंतःपुर से लौटा, तब तक वानरों ने राजतिलक की सब तैयारी पूरी कर ली थी। सोने के कशीदे वाला सफेद छत्र, दो चंवर, अनेक प्रकार के मानिक, बीज और औषध, पुष्प, चंदन, अक्षत, केसर, शहद, घी, दही, सब कुछ तैयार था। जंगली सूअर के चमड़े से बनाये गये जूते भी थे।

अब ब्राह्मणों ने अग्नि प्रज्वलित करके अग्नि पूजा की और फिर वेदोत्क विधि से सुग्रीव का राज्याभिषेक किया। गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गंधमादन, मैंद, द्विविद, हनुमान्, जांबवंत, नल आदि

सबने स्वर्ण कलशों और बैल के सींगों में नदी का जल भर-भर कर सुग्रीव का अभिषेक किया ।

राम के आदेशानुसर सुग्रीव ने अंगद का युवराज के नाते अभिषेक करवाया । इससे सभी वानर बहुत प्रसन्न थे और उन सब ने सुग्रीव की भरपूर प्रशंसा की ।

राज्याभिषेक के बाद सुग्रीव राम से मिलने गया और उन्हें समूचा वृत्तांत कह सुनाया । फिर वह वापस किष्किंधा चला आया । अब उसकी पत्नी रुमा भी उसके पास थी । उनका समय सुख-शांति से बीतने लगा ।

राम और लक्ष्मण जिस गुफा में रहकर वर्षा-ऋतु बिता देना चाहते थे, वह गुफा प्रस्रवण पर्वत पर स्थित थी । प्रस्रवण एक सुंदर पर्वत था । वहाँ एक सरोवर भी था जो कमल-पुष्पों से भरा रहता । गुफा का द्वार नैऋति दिशा में था । इसलिए वर्षा की फुहार गुफा में प्रवेश नहीं कर पाती थी । पूरब से आने वाली ठंडी हवाएँ भी भीतर नहीं पहुंचती थीं । गुफा के सामने सुंदर, समतल स्थल था । पास ही एक नदी बहती थी । किष्किंधा भी वहाँ से दूर नहीं था । इसलिए किष्किंधा में होने वाले हर उत्सव का वहाँ पता चल जाता था ।

ऐसे सुंदर स्थल पर रहते हुए राम को सीता की याद आने लगी, और वह दुःखी हो उठे । पर उन्हें भरोसा था कि वर्षा ऋतु समाप्त होते ही सुग्रीव रावण का वध करने में उनकी मदद करेगा । वर्षा ऋतु धीरे-धीरे जा रही थी । पर उनके लिए वह बड़ी कष्टदायक बन गयी थी ।

आखिर वर्षा-ऋतु जब बीत गयी तो हनुमान् को लगा कि सुग्रीव अपना दिया वचन भूल गया है और हर समय अंतःपुर में ही पड़ा रहता है । हनुमान् से अब रहा न गया । वह सुग्रीव के पास गया और उससे बोला, "तुम्हें राज्य मिला, राजवैभव मिला, अब तुम अपने मित्र-धर्म को भुलाये बिना अपने दायित्व की पूर्ति करो, तुम्हारे अपने काम चाहे

बीच में ही पड़े रहें । अपने धर्म का पालन करने वाला व्यक्ति कभी बदनाम नहीं होता । अब हमें सीता की खोज शुरू कर देनी चाहिए । वास्तव में यह काम अब तक शुरू हो जाना चाहिए था । राम भले हैं, इसलिए सहन कर गये, वरना... ।"

हनुमान् से फटकार पाकर सुग्रीव संभला । उसने नील को बुलाकर अदेश दिया कि वह चारों दिशाओं में फैले वानर सैनिकों को बुलवा ले, और यह भी घोषणा करवा दे कि जो वानर सैनिक पंद्रह दिन के भीतर किष्किंधा नहीं पहुंचेगा, उसे मृत्युदण्ड दिया जायेगा ।

उधर राम अपनी तरह से दुःखी थे । उन्हें दुःख इस बात का था कि वर्षा-ऋतु समाप्त हो जाने पर भी सुग्रीव उनसे मिलने नहीं आया । वह लक्ष्मण से बोला, "जाओ, सुग्रीव से कहो कि जहाँ मैंने बालि को भेजा है, वहाँ मैं उसे भी भेज सकता हूँ । वह मेरी इस तरह उपेक्षा नहीं कर सकता । अपने वचनानुसार उसे अब तक सीता की खोज का काम शुरू कर देना चाहिए था । शरद ऋतु कब की शुरू हो गयी! फिर भी मैं तुम पर छोड़ता हूँ, जैसे शब्द तुम प्रयोग में लाना चाहो, लाओ ।"

लक्ष्मण तो वैसे ही गुस्सा खाये हुए था । राम का दुःख जानकर उसका गुस्सा बढ़ गया । वह बोला, "मैं अभी सुग्रीव का वध कर दूँगा । उसे याद ही नहीं कि उसे यह राज्य कैसे मिला । वह अब इस राज्य का सुख भोग नहीं पायेगा । मैं अंगद की सहायता से सीता माँ की खोज कराऊँगा ।"

और इन्हीं शब्दों के साथ लक्ष्मण चलने को तैयार हुआ । तब राम ने उसे रोका, "लक्ष्मण, ऐसा मत करना । हमारे सुग्रीव के बीच मैत्री संबंध हैं । तुम उन्हें न भूलो । सुग्रीव से शांति से बात करो । उस ने विलंब ज़रूर किया है, पर हमारे प्रति कोई अनाचार नहीं किया ।"

कामेश का गुस्सा

कामेश एक निहायत चिड़चिड़े स्वभाव का व्यक्ति था। वह छोटी-छोटी बात पर भड़क उठता और ऊल जलूल बकने लगता। कई बार वह हाथा-पाई पर भी उतारू हो जाता।

कामेश की नयी-नयी शादी हुई थी। उसकी पत्नी शांति बहुत ही सरल और शांत स्वभाव की थी। वह जब ससुराल में आयी तो उसे कामेश के स्वभाव के बारे में खबरदार कर दिया गया। उसे यह भी बताया गया कि वह घर के भीतर जाते समय पहले दायाँ पैर आगे रखे। फिर भी भूल से शांति का बायाँ पैर ही आगे आया।

कामेश के लिए तो, बस, इतना ही काफी था। उसका गुस्सा एकदम भड़का और उसने पत्नी का हाथ खींचेते हुए उसे झंझोड़ा, "क्या तुमने सुना नहीं? तुम्हें क्या बताया गया था और तुम ने यह क्या किया था? पहले दायाँ पैर आगे रखना था!"

लेकिन अब क्या हो सकता है! खैर, शांति को अपने पति के स्वभाव का परिचय तो मिल ही गया। धीरे-धीरे उसे यह भी पता चला कि घर में जो कुछ टूटा-फूटा है, वह उसके पति, कामेश, के गुस्से का ही परिणाम है। जिधर देखो कुछ-न-कुछ टूटा हुआ दीख पड़ता। बरतन देखो तो उनकी शक्ल बिगड़ी हुई, दीवारें देखो तो उन पर अजीबोगरीब दाग, जैसे उनपर तरकारी उड़ेल दी गयी हो।

एक दिन शांति उन चिह्नों को बड़े ग़ौर से देख रही थी। तब उसकी सास ने उसे बताया कि जब-जब तरकारी कामेश की

सुनीता चौधरी

रुचि-अनुसार नहीं बनी, तब-तब उसने बाही-तबाही कर दी । ये सब निशान उसी के हैं ।

शांति खामोश रही । उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि स्थिति को कैसे संभाले । एक दिन उसने हिम्मत करके अपने पति से इसके बारे में सीधे ही पूछ लिया । पति थोड़ा-सा मुस्कराया भर । बोला कुछ नहीं ।

शांति अब अपने पति को ठंड़ा करने के उपाय सोच रही थी । वह चाहती थी कि उस के पति का मिजाज़ बिलकुल दुरुस्त हो जाये । बहुत सोचने के बाद उसने एक निर्णय लिया कि वह अपने पति के सामने हमेशा भोली-भाली बनी रहेगी और उसे ऐसे जतायेगी जैसे कि वह ज़्यादा कुछ समझती-बूझती नहीं ।

एक दिन कामेश जब घर लौटा तो वह बहुत तमतमाया हुआ था । पत्नी ने कुछ बात करनी चाही तो उसने उसे बुरी तरह डपट दिया, और फिर इतना ही बोला, ''जा जल्दी कर । अन्न के दो-चार दाने जो हैं, लाकर उन्हें मेरे मत्थे मार । अभी मुझे काफी खपना है!''

शांति को अपने पति की बात से कोई हैरानी नहीं हुई । उसने उसी तरह उसके सामने अन्न के चार दाने परोस दिये और खुद किसी दूसरे काम में व्यस्त होने का दिखावा करने लगी । फिर उसी तरह अपने काम में लगे-लगे पीछे देखे बिना ही वह बोली, ''मान गये आपको! अन्न के चार दानों से भूख

मिटाना कोई आप से सीखे! यह तो पहले कथा-कहानी में ही पढ़ा करते थे!"

अब कामेश के भड़कने की बारी थी। उसे लगा कि उसकी पत्नी ने यह सब जान-बूझकर किया है। पर पत्नी ऐसी मासूम बनी रही जैसे कुछ हुआ ही न हो। इस पर कामेश को लगा कि वह भोली ही नहीं, बुद्धू भी है। इस विचार के मन में आते ही उसका सारा गुस्सा दूर हो गया।

तीन-चार बार कुछ इसी तरह की घटनाएँ घटीं। एक बार कामेश बहुत गुस्से में था। उसकी पत्नी रसोई घर में थी। वह चिल्लाया, "कहाँ मर गयी! सब्जीवाला थैला कहाँ है? लाकर मेरे मुँह पर मारो ताकि सब्जी ला मरूं!"

शांति ने ठीक वैसे ही किया जैसे उसके पति ने कहा था। उसने थैला ला उसके मुँह पर मारा। कामेश हैरान रह गया। उसने शांति की इस हरकत के बारे में जानना चाहा। वह बोली—

"अपने खुद ही तो कहा था कि मैं आपके मुँह पर दे मारूँ। मुझे क्या पता था! मैंने सोचा शायद यही आपके घर का तौर-तरीका हो, और ऐसा न करना शायद यहाँ अशुभ माना जाता हो!"

कामेश के पास अब उत्तर के लिए शब्द नहीं थे।

इसी प्रकार की एक और घटना घटी।
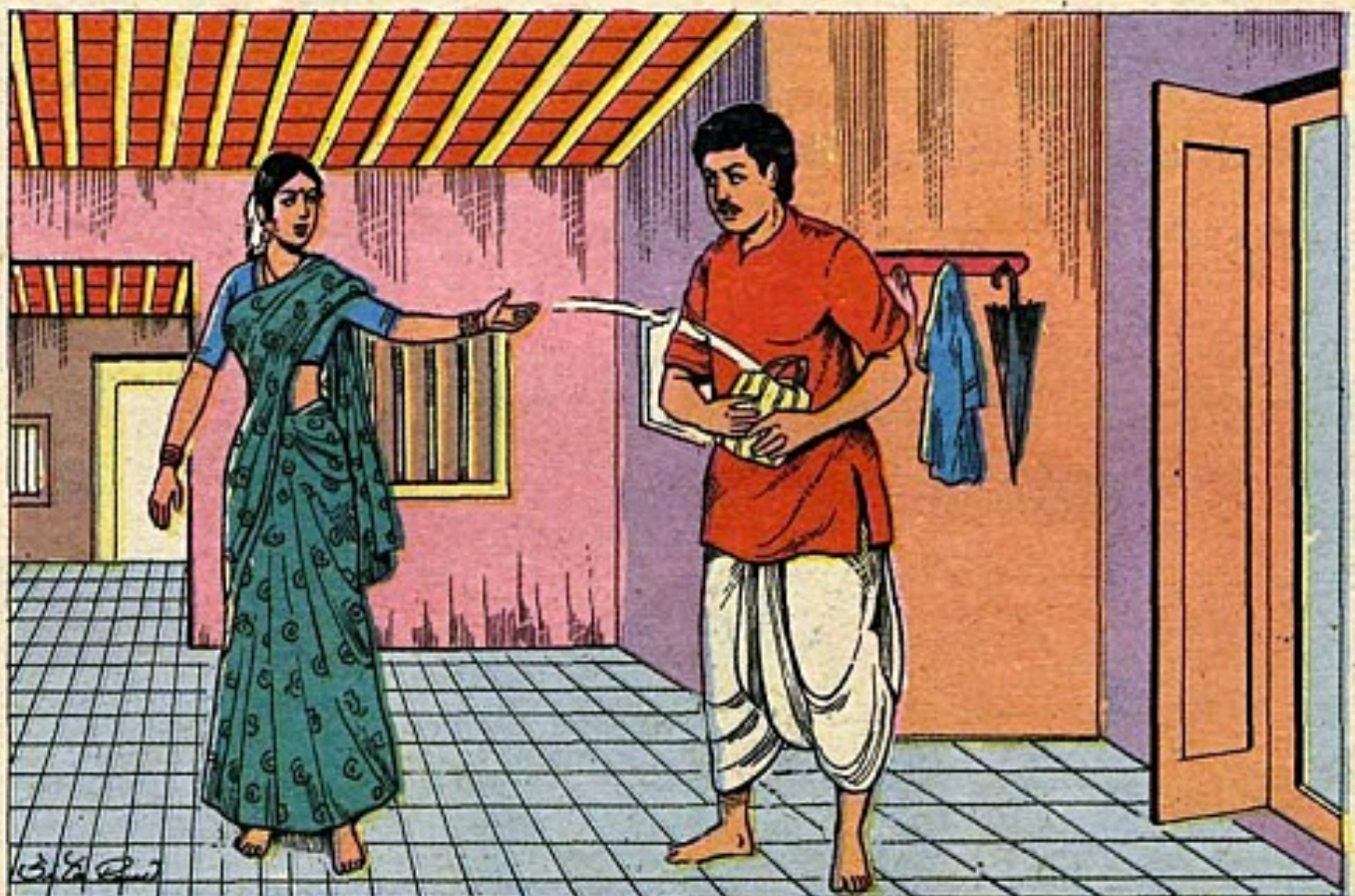
उनके घर के सभी-लोग पास के गाँव में शादी पर गये हुए थे। घर में केवल कामेश और शांति ही थे। ओसारे में पड़ा चावल-धोवन वाला घड़ा भर चुका था। शांति उसे कहीं उंडेलना चाहती थी। आंगन में पेड़ के नीचे एक कुंड था। वह धोवन प्रायः उसी कुंड में उंडेला जाता। वहाँ गाय उसे पी लेती। लेकिन उस रात गाय ने धोवन नहीं पिया। इसलिए कुंड भरा हुआ ही रहा।

शांति ने कामेश से जानना चाहा कि वह धोवन कहाँ उंडेले। कामेश योगासन कर रहा था। पत्नी का प्रश्न सुनकर वह झुंझला उठा। बोला, "मेरे सिर पर उंडेल दो!" और फिर आसन करने लगा।

कामेश के मुँह से अभी शब्द निकले भी न थे कि धोवन का घड़ा उस पर उंडेल दिया गया। कामेश ने बैखला कर आँखें खोलीं और गुस्से में शांति के मुँह पर थप्पयड़ दे मारा। शांति हक्की-बक्की रह गयी।

लेकिन कामेश का गुस्सा अभी वैसे ही था। बोला, "क्या तुम्हें तमीज़ सिखानी होगी? तुम बिलकुल उजड्ड की उजड्ड रही!"

शांति की आँखों में आँसू आ गये। "आपने ही तो कहा था! मैंने सोचा शायद धोवन का यह पानी स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी है!" वह मासूम बनी कहती गयी।

अब कामेश के लिए कोई चारा न रहा, वह वहीं अपना माथा पकड़कर बैठ गया। तब शांति एक तौलिए से उसका बदन पोंछते हुए बोली, "मुझ से भूल हो गयी। आप मुझे क्षमा करें!"

इस पर कामेश को भी अपने ऊपर अफसोस हुआ। वह अपनी पत्नी के प्रति सहानुभूति से भर उठा। उसे पहली घटनाएं भी याद हो आयीं। उसका गुस्सा अब उससे पूरी तरह विदाई ले चुका था। वह अब किसी और को भी गुस्से में देखता तो उसे शांत रहने की सलाह देता।

शांति भी अब अपने पति की पूरी तरह आज्ञाकारिणी बन चुकी थी।

सोने का चूहा

एक देश था प्रतिष्ठान । उसमें आदर्शनगर नाम का एक शहर था । उस शहर में एक निर्धन वैश्य विधवा रहती थी । उसका पुत्र बड़ा हो गया तो माँ ने उसे समझाया:

"बेटा, तुम एक वणिक् पुत्र हो । व्यापार करना हमारा पेशा रहा है । दुर्भाग्यवश तुम जन्म से ही धनहीन हो । इसी शहर में धनगुप्त नाम का एक करोड़पति है । वह धनहीन वणिकों की व्यापार के लिए मदद करता है । तुम उससे मिलो और आवश्यक पूंजी की व्यवस्था करो ।"

माँ की बात सुनकर वह वणिक्पुत्र उस करोड़-पति से मिलने गया । तब धनगुप्त किसी अन्य युवक को डांटते फटकारते हुए कुछ इस तरह कह रहा है:

"तुम में तो ज़रा भी व्यापार-क्षमता दिखाई नहीं देती । कई बार मैंने तुम्हें व्यापार के लिए धन दिया, पर तुम ने मूल धन भी डूबो दिया । यदि तुम में ज़रा भी व्यापार-बुद्धि होती तो तुम उस मरे हुए चूहे को भी पूंजी बनाकर लाखों कमा लेते!"

धनगुप्त की बात सुनकर वणिक् पुत्र ने उससे व्यापार के लिए धन नहीं मांगा, बल्कि वहाँ पड़े उस मरे हुए चूहे को लेकर वह वापस हो लिया । रास्ते में एक पंसारी की दुकान थी । उस दुकान पर एक बिल्ली थी । उसने वह मरा हुआ चूहा उस बिल्ली को खिला दिया । पंसारी यह देखकर खुश हो गया और उसने उसे बतौर इनाम दो अंजुलि भर चने दिये । चनों में वणिक पुत्र ने नमक-मिर्च मिलाया और उन्हें स्वादिष्ट बना लिया । फिर एक घड़ा पानी और वे चने लेकर वह शहर के बाहर, मार्ग के किनारे एक पेड़ के नीचे बैठ गया ।

गरमी का मौसम था । धूप बहुत तेज़ थी । जंगल से लकड़ी काटकर जो लकड़हारे

२५ साल पहले चंदामामा में प्रकाशित कहानी

लौटते, वे आराम करने के लिए उस पेड़ के नीचे भी बैठते । वणिक् पुत्र उन्हें मसालेदार चने खिलाता और ठंडा पानी पीने को देता । इससे वे लकड़हारे बहुत खुश होते और उसे कुछ लकड़ियाँ दे जाते ।

जब काफी लकड़ियां इकट्ठी हो गयीं तो वणिक् पुत्र उन्हें गट्ठर में बांधकर मंडी की तरफ बढ़ा और मंडी में उन्हें बेचकर उसने फिर चने खरीदे । अब उसने उन चनों को खूब ढंग से तला, उन में मसाला मिलाया और उन्हें लेकर पानी के घड़े के साथ फिर उसी छायादार पेड़ के नीचे जा बैठा । दोपहर को लकड़हारे जब जंगल से लौटे तो उसने उन्हें चने खिलाये और ठंडा पानी पिलाया । इस सेवा के बदले लकड़हारे उसे ढेर-सारी लकड़ियाँ दे गये ।

वणिक् पुत्र के पास अब काफी मात्रा में धन इकट्ठा हो गया था । अब उसने चने खिलाना छोड़ दिया और सीधे लकड़हारों से लकड़ियाँ खरीदकर उन्हें मंडी में बेचने लगा । उसके पास लकड़ियाँ तो काफी जमा थीं । उधर बारिश का मौसम शुरू हो गया । वणिक् पुत्र ने अच्छे दामों में अपनी लकड़ियाँ बेचीं और उस पैसे से पंसारी की एक छोटी-सी दुकान खोल ली ।

दुकान में वणिक् पुत्र को अच्छा लाभ मिलने लगा । वह धीरे-धीरे अब एक बड़ा व्यापारी बनता जा रहा था । ज़मीन-जायदाद भी उसने अच्छी बना ली । अब वह लखपतियों में शुमार होने लगा । लोग उसे 'चूहा सेठ' कहकर पुकारने लगे ।

'चूहा सेठ' ने चूहे की एक सुंदर स्वर्ण मूर्ति बनवायी । उस मूर्ति के साथ एक दिन वह सेठ धनगुप्त के यहाँ पहुँचा और सोने का चूहा देकर बोला, "भगवन्, मैं ब्याज के साथ आपका ऋण चुका रहा हूँ!"

"वह कैसे?" धनगुप्त ने पूछा ।

इस पर वणिक् पुत्र ने सारी कहानी कह सुनायी । वणिक् पुत्र की कहानी से धनगुप्त बहुत प्रभावित हुआ । उसने उसकी बुद्धि और कर्मठता की दाद दी और अपनी इकलौती बेटी की उस से शादी कर दी । पुरस्कार-स्वरूप उसने उसे वह सोने का चूहा भी लौटा दिया ।

रेशम कैसे बना?

तीन हज़ार साल पहले की बात है। तब चीन के सम्राट ने एक खूबसूरत लड़की से शादी की। लड़की की उम्र केवल चौदह वर्ष थी। उसका नाम था सीलिंगशी। खूबसूरत तो वह थी ही, उतनी नाज़ुक भी थी। शाहंशा ने उसे पटरानी का दर्जा दिया। बड़ी इज़्ज़त थी उसकी। हर कोई उसे रिझाने की हरदम कोशिश करता। गाने-नाचने वालों की तो कोई कमी ही न थी।

इस सब के बावजूद सीलिंगशी उदास रहती। उसकी आँखों से अकसर आँसू बहते रहते। हर संभव उपाय किये गये, पर सीलिंगशी की उदासी नहीं गयी। इस उदासी का कारण दरअसल दूसरा था। वह था उसकी छोटी उम्र तथा माँ-बाप, भाई-बहनों से बिछुड़ जाना।

इस उदासी की खबर सम्राट् तक भी पहुँची। खबर मिलते ही वह उससे मिलने चला आया। सीलिंगशी उद्यान में शहतूत के एक पेड़ के नीचे बैठी थी। सम्राट् ने चिंतातुर उससे प्रश्न किया, "क्यों उदास हो, मेरी प्यारी? क्या तबीयत ठीक नहीं?"

"नहीं, एसी बात तो नहीं। बस यों ही!" सीलिंगशी ने उत्तर दिया।

सम्राट् ने आदेश दिया कि मंत्रियों को बुलाया जाये। मंत्री आये तो उन्हें आदेश मिला कि महारानी का जी बहलाने के कोई नये उपाय सोचे जायें।

सम्राट् चला गया तो परिचारिकाओं ने महारानी के सामने चाय की केतली लाकर रखी। अपनी आदत के मुताबिक महारानी ने वहाँ मौजूद सब के लिए चाय बनायी और एक प्याला अपने सामने रख लिया।

अभी महारानी सीलिंगशी ने प्याला अपने होंठों से लगाया भी नहीं था कि ऊपर पेड़ से

चीन की लोककथा

बताया गया कि यह रेशम के कीड़ों द्वारा बनाया गया कोया या कोश है । ऐसे कोये शहतूत के पेड़ों पर भारी मात्रा में मिलते हैं और उस पेड़ पर भी हैं जिसके नीचे सीलिंगशी बैठी है ।

"ओह, कितने प्यारे रेशे हैं! अगर इनसे तागे बन पाते तो कितने सुंदर कपड़े तैयार होते!" सीलिंगशी ने मन ही मन हिसाब लगाया । फिर दूसरे ही पल उसके मन में एक और विचार आया—ये रेशे बारीक तो हैं, साथ ही उतने उम्दा और मज़बूत भी हैं । ऐसे रेशे एक कोये में कितने होंगे? अनगिनत! यदि इन्हें बट लिया जाये तो बढ़िया तागा तैयार हो सकता है । फिर कपड़ों की क्या कमी!

इस विचार के मन में आते ही सीलिंगशी की सारी उदासी काफ़ूर हो गयी । उसने फौरन परिचारिकाओं को आदेश दिया कि वे कोयों से रेशे निकालें और उन्हें तागों में बट लें । आदेश पाते ही परिचारिकाएँ रेशों को बटने में लग गयीं । फिर उन्होंने तागों के लच्छे तैयार किये ।

"पर ये लच्छे तो कपड़ा तैयार करने के लिए काफी नहीं हैं," सीलिंगशी ने कहा । "अच्छा हो तुम इस पेड़ पर चढ़ जाओ, और जितने भी कोये हैं उन्हें उतार लाओ और फिर उन्हें चाय में डालो ।"

अब हर कोई व्यस्त था । किसी के पास कोई फ़ुर्सत न थी—न परिचारिकाओं के पास और न ही सीलिंगशी के पास । पहले एक-एक पल एक-एक युग-सा बीतता था । अब एक-एक पल

'टप' की आवाज़ के साथ उसके प्याले में कुछ गिरा । इससे कुछ छींटे सीलिंगशी की पोशाक पर भी गिरे । परिचारिकाओं ने जब देखा कि महारानी की पोशक खराब हो गयी है तो वे दौड़ती-सी उसके निकट आयीं ।

"मेरे कपड़ों की तुम लोग चिंता न करो," सीलिंगशी बोली, "पहले मुझे यह बताओ कि प्याले में गिरा क्या है!"

परिचारिकाओं ने ग़ौर से देखा । वह सूत के लाच्छे जैसी कोई चीज़ थी । उन्होंने उसे प्याले से निकाला और महारानी की हथेली पर रख दिया । अब महारानी ने उसकी तरफ गौर से देखा । उस में से कुछ रेशे निकल रहे थे । वे बहुत चमकीले थे । फिर उन्हें छूकर देखा तो वे मज़बूत भी लगे । सीलिंगशी को

एक- एक क्षण में बीतने लगा । बल्कि एक-एक घंटा चुटकी बजाते ही निकल जाता । सूरज कब निकलता है और कब डूबता है, इसकी वहाँ किसी को खबर ही न रहती थी ।

जब रेशमी तागे के कई गुच्छे तैयार हो गये तो सीलिंगशी ने बढ़ई को बुला भेजा और उसे आदेश मिला कि वह जल्दी से जल्दी कपड़ा बुनने वाला करघा तैयार करे और वह करघा ऐसा होना चाहिए जिस पर बारीक से बारीक तागा चल सके ।

कुछ दिन बाद सम्राट् ने अपने मंत्रियों को बुलवाया और उनसे जानना चाहा कि उन्होंने महारानी की उदासी दूर करने का कौन-सा उपाय सोचा है ।

"हम ने जो उपाय सोचा है, वह बहुत सरल है । हर एक सुंदर मोर मंगवाकर महारनी के उद्यान में छोड़ देंगे । वह मोरअपने सुंदर पंख फैलाकर जब नाचेगा तो महारानी का चित्त प्रसन्न हो जायेगा," वे सब एकमत हो बोले ।

सम्राट् ने जान लिया कि मंत्रियों को कोई ढंग का उपाय नहीं सूझा है । उसने तब महारानी को बुलवा भेजा ।

"प्रभु, महारानी अभी तक अपने प्रार्थना गृह में ही हैं । वह बाहर नहीं आयी हैं," परिचारिकाओं ने सूचना दी ।

"अभी तक बाहर ही नहीं आयीं!" सम्राट् ने हैरानी दिखायी । उसे कुछ चिंता भी हुई । वह अपने सिंहासन से उतरा और सीधे महारानी के मंदिर में पहुँचा । मंदिर में महारानी को देखकर वह दंग रह गया । महारानी अब उदास और गुमसुम नहीं थी, बल्कि कोई गीत गुनगुनाती हुई एक अजीब से करघे पर ऐसा वस्त्र बुन रही थी जिसकी चमक निराली थी । ऐसा वस्त्र पहले किसी ने नहीं देखा था । जिन तागों से वह बुन रही थी, वे भी निराले थे ।

महारानी सीलिंगशी को इस प्रकार व्यस्त देखकर सम्राट् को बहुत खुशी हुई । उधर सीलिंगशी ने सम्राट् को अचानक मंदिर में देखा तो वह भी खुशी से भर उठी । उसकी आँखों में अभूतपूर्व आनंद की चमक थी । उस ने लपककर सम्राट् का स्वागत किया ।

"मेरे दिल के सम्राट्, मैं आपसे क्षमा चाहती हूँ । मेरी खातिर आप इतने परेशान

रहे । अब जितनी परेशानी मैं ने आपको दी, उसके बदले में मैं आपको यह वस्त्र भेंट करना चाहती हूँ । अद्भुत है न यह वस्त्र! जो भी इसे पहनेगा, अचरज से भर जायेगा!'' सीलिंगशी ने याचना के स्वर में कहा ।

''बेशक! बेशक!'' सम्राट् ने उस पर प्यार उंडेलते हुए कहा, ''ऐसा सुंदर वस्त्र पहनकर तो मैं अपने को धन्य समझूंगा । यह मेरे लिए बहुत बड़ा पुरस्कार होगा!''

सीलिंगशी अब विह्वल हो रही थी । उसने सम्राट् को वह सब बता दिया जिसके कारण वह उदास थी, और वह भी जिसके कारण उसकी उदासी दूर हुई ।

''आपकी पटरानी होने के नाते मैं यह भी नहीं चाहती थी कि लोग मुझे काम करते देखें और आपके बारे में कुछ इधर-उधर की हाँकें । इसीलिए मैं ने यह जगह चुनी । यहाँ कोई नहीं आता-जाता,'' सीलिंगशी ने अपना स्पष्टीकरण पूरा किया ।

''हमें तो, बस खुशी इस बात की है कि तुम बिलकुल ठीक हो । तुम्हें ठीक-ठीक देखने के लिए मैं कुछ भी न्योछावर करने को तैयार था, चाहे वह आधा राज्य ही क्यों न होता! अब तुम्हें संतोष है तो हमें भी संतोष है!'' सम्राट् बोला ।

''महाराजाधिराज, मेरी एक इच्छा है! क्या आप उसे पूरा करेंगे!'' सीलिंगशी ने पूछा ।

''क्यों नहीं! जो भी तुम्हारी इच्छा है, कहो,'' सम्राट् अपनी पूरी उदारता में था ।

''बस एक हज़ार शहतूत के पेड़ों का एक बगीचा मेरे लिए तैयार करवा दीजिए ।'' महारानी सीलिंगशी ने मांग की ।

सम्राट् ने उसकी इच्छा पूरी कर दी ।

संसार के पहले रेशमी वस्त्र को बुनने का श्रेय सीलिंगशी को ही है । चीनी भाषा में 'सी' का अर्थ है रेशम । सीलिंगशी ने एक परंपरा शुरू की । चीन की महारानियाँ काफी समय तक साल में एक दिन अपने हाथों से ही रेशम के कीड़ों को खिलाती रहीं ।

रेशमी कपड़े बुनने का यह राज़ धीरे-धीरे दूसरे देशों तक भी पहुँचा । दूसरे देशों में, बेशक, रेशमी कपड़ा तैयार होता है, लेकिन जो बात चीन के रेशमी कपड़े में है, वह और कहीं नहीं ।

अनुमान है कि पृथ्वी का १०.४ प्रतिशत या ६०,२०,००० वर्ग मील का क्षेत्र स्थायी रूप से हिम, यानी बर्फ से ढका हुआ है, और यही बर्फ धीरे-धीरे हिमानी, यानी बर्फ की नदी के रूप में नीचे उतरती रहती है ।

हिमानी

सर्पहंता पक्षी

अफ्रीका में एक पक्षी है 'सेक्रेटरी बर्ड' । यह पक्षी सांपों का शिकार ही करता है, और शिकार भी हवा में नहीं, जमीन पर करता है । बस, सांप देखा नहीं, और इसने उसे अपने पंजों से रौंदकर कुचला नहीं ।

रूस के साइबेरिया के मध्य में पाया जाने वाला सरोवर 'लेक बेकल' दुनिया का सब से गहरा सरोवर है, इसकी गहराई है ४,८७२ फुट, यानी १, ४८५ मीटर!

भूल-भुलैया में छिपा दोस्त!

इस चित्र में यहां बताए अनुसार सही रंग भरो और देखो कैसे प्रकट होता है तुम्हारा सच्चा प्यारा दोस्त—मददगार और भरोसेमंद.
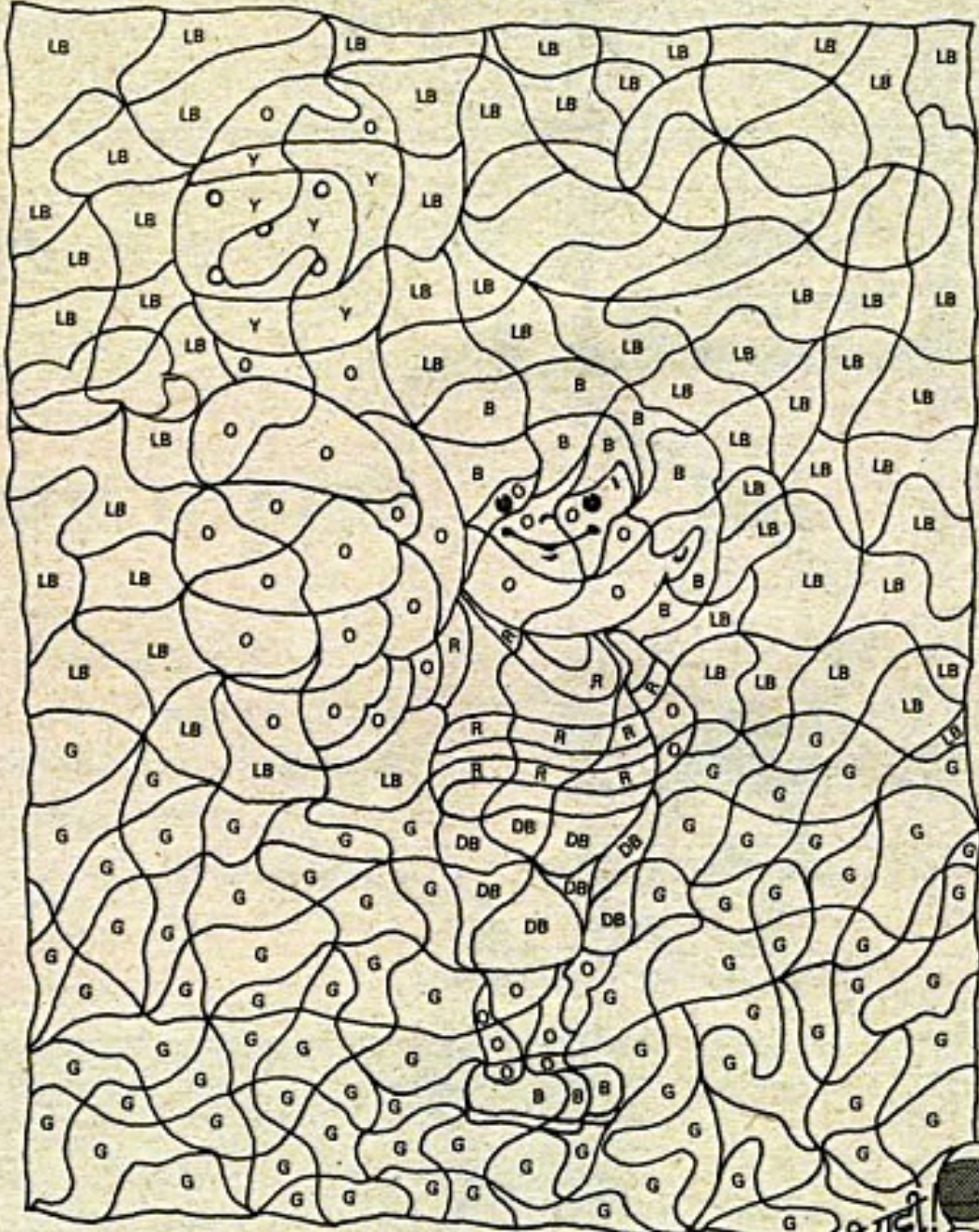
बिंदु वाली रेखा पर काटो

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ फरवरी १९९१ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

V. Rajamani

Anand P. Patel

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ दिसम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अक्तूबर १९९० की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो : हम दोनों का प्यार !

द्वितीय फोटो : हमारा चौकीदार !!

प्रेषक : कु. सुमती द्विवेदी, ११५, सहयोग अपार्टमेन्ट, मयूर विहार I, दिल्ली-११० ०९१

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६/-

चन्दा भेजने का पता :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
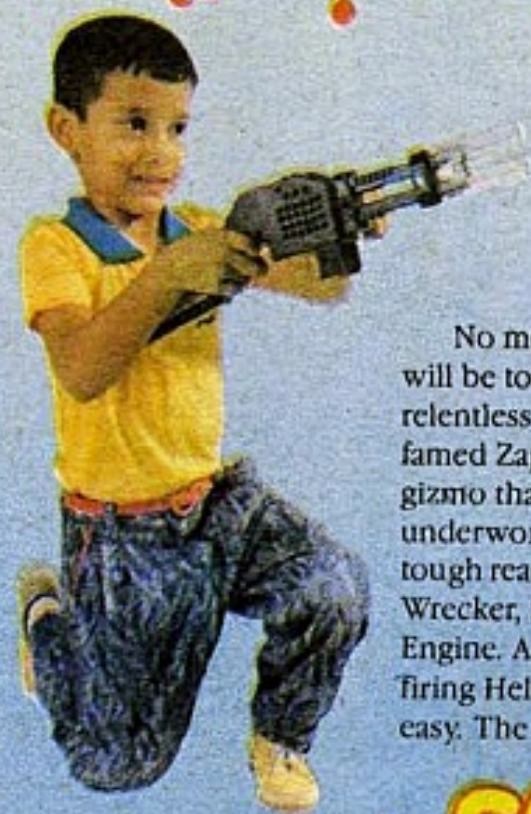
RAMBO IV
No more evil, injustice and crime will be tolerated in this city. The relentless crusader is here. With his famed Zap Gun (the three sound gizmo that's the terror of the underworld) and his fleet of rough 'n tough ready-for-action vehicles — Wrecker, Super Dumper and Fire Engine. And of course, his missile-firing Helicopter. So...breathe easy. The one man army is here.
SAMMO
Mechanical and electronic toys
CHANDAMAMA TOYTRONIX
In collaboration with Sammo Corporation, S.Korea

CHANDAMAMA (Hindi) December 1990 Regd. No. M. 5452

मैंगो से महान!

nutrine
Naturo
MANGO FRUIT BAR

न्यूट्रीन के नेचुरो सदाबहार. मोटे-मोटे जूसी मैंगो बार.
आम के शुद्ध गूदे से तैयार.
मीठे-मीठे. रस की खान. वाकई! मैंगो से महान!

Mudra:BH-NN-310:90:HN